फ़ूल बच्चा और ज़िन्दगी

(कहानी संग्रह)

देवेन्द्र इस्सर

साहित्य संगम

लुधियाना

प्रकाशक :
जीवन सिंह ऐम. ए.
साहित्य संगम, क्लाक टावर,
लुधियाना ।

पहली बार

मूल्य तीन रुपये

प्रिन्टर :
सदर सिंह
दी गुरदसमेश प्रिन्टिंग ऐण्ड पब्लिशिंग सिंडीकेट लिमिटिड,
लुधियाना ।

फूल
बच्चा
और
ज़िन्दगी

सुरेन्द्र के नाम———!

सूची

अपनी बात

इस संग्रह में मेरी दस कहानियां सम्मिलित हैं—अच्छी या बुरी इसका निर्णय तो आप करेंगे ही। लेकिन अपनी ओर से मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि यह कहानियां मैं ने आप के सामने उस समय रखने का साहस किया जब मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि इन में कोई ऐसा परिवर्तन करना मेरे लिये सम्भव नहीं जिस से इन कहानियों का कलास्तर और ऊंचा हो सके। इसी लिये मेरा 'कलात्मक विवेक' संतुष्ट है। वैसे लिखने को तो आदमी विवेक की इस सुन्तुष्टि के बिना भी निरन्तर लिखता रहता है। इसी लिए 'लिखने' लिखने में अन्तर है। मैं समझता हूं कि जबतक आप के मस्तिष्क में लिखने का केवल विचार ही है तो मत लिखिए। यदि आप लिखे बिना नहीं रह सकते तो अवश्य लिखिए। प्रश्न तो यह है कि लिखना किसे कहते हैं ? किसी ने कहा है कि लेखक वह है जिसे यदि कमरे में बन्द कर दिया जाए और थोड़े समय बाद जब वह बाहर आए तो उसके हाथ में कहानी हो। लेकिन मैं इसे लिखना नहीं मानता। आखिर ऐसे आदमी को लेखक की अपेक्षा टाइपराइटर क्यों नहीं कहा जाता। अपनी तो यह बात है कि कई बार कहानी लिखने का विचार करता हूं लेकिन लिख नहीं पाता। हज़ार कोशिश करता हूं लेकिन जैसे क़लम को ज़ंग लग चुका है। हरकत में ही नहीं आती। परन्तु अनायास रात दिन के किसी क्षण में 'क़लम काग़ज़' का सम्बन्ध स्वयं ही कायम हो जाता है और काग़ज पर शब्द बाद में आते हैं मगर मस्तिष्क में

चित्र पहले ही चलचित्र का रूप धारण कर लेते हैं। और बिना किसी बाह्य प्रेरणा के कहानी लिखी जाती है। यह क्या बात हुई? क्या कोई दिव्यशक्ति जाग उठी? क्या सृजन की सुप्त आन्तरिक लगन अंगड़ाई लेने लगी? क्या सामाजिक व्यवस्था ने आप को प्रेरित कर दिया? कुछ भी नहीं हुआ! आप अपने जीवन में कुछ घटनायें देखते हैं। कुछ के बारे में आप सुनते हैं। कुछ के बारे में आपने पढ़ा होता है। कुछ घटनाओं में आप पूर्ण रूप से सम्मिलित होते हैं। कुछ आप को छू कर निकल जाता है। इन घटनाओं से कभी आप को प्रसन्नता होती है कभी दुःख। कभी आशा बन्धती है और कभी डर होता है। कभी इनके सामने आप आत्मसमर्पण कर देते हैं और कभी आप विद्रोह कर बैठते हैं। कभी सोचते हैं कि 'यूं न होता यूं हो जाता'। आप की कुछ आकांक्षाएं होती हैं जो इन घटनाओं से या तो पूरी हो जाती हैं या टूट जाती हैं। कुछ आदर्श होते हैं कुछ नैसर्गिक आवश्यकताएं होती हैं। कुछ नैतिक यन्त्रणाएं होती हैं, कुछ सामाजिक उत्तरदायित्व होता है और इसके अतिरिक्त बहुत कुछ होता है जो लेखक के अपने व्यक्तित्व पर निर्भर होता है। बस इन सब में अनायास एक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। सब कड़ियां इस 'मिसिंग लिंक' की प्रतीक्षा में होती है और जब यह लिंक मिल जाता है तो कहानी जन्म लेती है और हम लिखे बिना नहीं रह सकते हैं। हां इस में कलात्मक निपुणता अभ्यास की बात है और इसी लिए कहानी के जन्म को भी एक तरह की प्रसव-पीड़ा माना गया है। यदि हम यह सहन करने के लिए तैयार हैं तो हम लिख सकते हैं। और दोनों चीज़ों का विद्यमान होना बड़ा कठिन है। इस 'मिसिंग लिंक' को लाने के लिए चेतन, अर्धचेतन और अचेतन (सामजिक प्रेरणा तो होती ही है) भाग लेते हैं। यही वह क्षण है जब

कहानी जन्म लेती है जैसे रौशनी की बाढ़ उमड़ आती है । कुछ कहानीकारों के जीवन में यह क्षण जल्दी २ आता है और कुछ के जीवन में बहुत धीरे धीरे और कभी कभी । जो लेखक इस क्षण के बिना ही लिखते चले जाते हैं क्यों कि वह लेखक है और लेखक को कुछ न कुछ लिखते रहना चाहिए वरना आलोचक साहित्य में गतिरोध और मतिरोध का नारा लगा देंगे जो वे लेखक नहीं चाहते । ऐसे लेखक 'आटो मेटक' हैं। कुछ लेखक इस क्षण को निकट लाने के लिए सिग्रेट पीते हैं, चाय पीते हैं, काफी पीते हैं, शराब पीते हैं तब लिखते हैं। यह अपने में 'महत्वपूर्ण है लेकिन साहित्य रचना में कुछ और ही पीना पड़ता है, जिसे लोग जिगर का खून कहते हैं । हम में से कितने जिगर का खून पी सकते हैं। यह मैं नहीं जानता। लेकिन यह अवश्य जानता हूं कि इसके बिना महान रचना सम्भव नहीं। अपने सम्बन्ध में इतना कह सकता हूं कि इसके लिए अभी वर्षों की साधना की आवश्यकता है और इस में अपने सामर्थ्य के अनुसार प्रयत्नशील हूं—और यह संग्रह उसी प्रयत्न का परिणाम स्वरूप है।

देवेन्द्र इस्सर

ऐच ३,१५, न्यु राजेन्द्र नगर
नयी देहली

चनार का पेड़

विनय मेरा दोस्त है और अपने सारे दोस्तों की तरह मैं उसे प्यार करता हूं। वह मुझे कब, कैसे, कहां और क्यों मिला, यह एक गैरज़रूरी तफ़सील है। लेकिन जब वह मुझे मिला, तो मैं अपना घर-बार छोड़ कर जीविका की खोज में दिल्ली की तंग गलियों और चौड़ी सड़कों पर बेकार घूम रहा था और वह पानी की बोतलों में कार्बोलिक एसिड गैस भरने के कार्य में व्यस्त था। दिन भर वह घूम-फिर कर बोतलें बेचता था और रात भर पलक झपकाये बिना बोतलें भरने के काम में लगा रहता था। एक बार उसकी पलक झपक गयी थी, तो गैस के ज़ोर से एक बोतल टूट गयी और शीशे के टुकड़े उसके चेहरे और बाज़ू पर जा लगे थे। उन ज़ख्मों के निशान उसके माथे और बांहों पर अभी तक मौजूद हैं। शायद इसी लिए वह बार बार कहा करता दोस्त, चौकस रहना। पलक न झपकने पाये, नहीं तो उमर भर अपने चेहरे और बाज़ू पर ज़ख्मों का निशान लिये कहां छिपते फिरोगे?

मेरे दिल्ली आने के कुछ दिन बाद ही वह भी बेरोज़गार हो गया। उन्हीं दिनों 'कोका कोला' की प्रसिद्ध फ़र्म ने अपना कारखाना दिल्ली में खोल दिया था और विनय के पास बोतलें भरने के जितने क़ीमती फ़ारमूले थे, सब बेकार हो गये और वह स्वयं दिल्ली की लम्बी-लम्बी सड़कों पर रात दिन घूम-घूम कर सोचने लगा कि क्यों न वह 'कोका कोला' की फ़र्म में नौकरी कर ले। लेकिन उसने 'कोका कोला' की फ़र्म में नौकरी न की। शायद उसने कोशिश की, पर जगह न मिली

जब हम दोनों की जेबें खाली हो गयीं, तब हम घूमने की बजाय घंटों एक जगह बैठने लगे।

एक दिन मैं बैंक स्ट्रीट पर खड़े एक पेड़ के सहारे सिर लगा कर कुछ सोचने लगा कि एक बूढ़े से आदमी ने मेरे कंधों को झिंझोड़ा यंग मैन! तुम्हें क्या तकलीफ़ है?

मैं मानों किसी डरावने स्वप्न से चौंक उठा—कुछ नहीं...वैसे ही, ज़रा थक गया था।

विनय ने मेरे कंधों को थपकाते हुए कहा—यह आर्टिस्ट है और समझ रहा है कि चित्र पूरा होने से पहले ही उसके रंग ख़त्म हो रहे हैं, इस लिए ज़रा परेशान है।

बूढ़ा आदमी चला गया और विनय कुछ दिनों बाद भाग्य की परीक्षा के लिये पूना चला गया।

पूना में इमारतें बनवाने वाले किसी ठेकेदार के पास मज़दूरों की निगरानी और हिसाब-किताब रखने पर नौकर हो गया। दो-अढ़ाई महीने बाद इमारत का निर्माण पूरा हो गया। उसका पत्र आया:—

'लेबारेटरी की इमारत पूरी बन चुकी है। मज़दूर औरतें और मर्द किसी नयी इमारत के निर्माण की खोज में बेकार घूम रहे हैं—मंगलू, मुराद, लंगाया, सोपामाँ और मैं—सब के सब बेकार हैं। उनके हाथ सीमेन्ट के सिलेटी रंग में डूबे हुए हैं। सिर के बाल मिट्टी में अटे हुए और चोटें खाये पांव पर रिसते हुए ज़ख्म हैं इतनी बड़ी इमारत के निर्माण के बाद वे ऐसे दिखते हैं, जैसे भूकम्प के बाद इस इमारत के खंडहर

दीख पड़ेंगे।...गुलमोहर के छोटे पेड़ लाल फूलों से लदे हुए हैं और धीरे धीरे फूल सूख कर धरती पर गिर रहे हैं। मैं बेकार हूं, मुझे फुरसत है और गुलमोहर के फूल सुन्दर नहीं दीखते...

मैं ने उसके पत्र का कोई उत्तर न दिया। उसकी ज़िन्दगी में जो ज़हर हौले-हौले समा रहा था, उसमें मैं और अधिक कटुता नहीं शामिल करना चाहता था। कुछ दिन बाद पत्र फिर आया। इस बार बहुत संक्षेप में लिखा गया था :—

'मेरे पास पैसे नहीं, काम नहीं और जूलियट अब बहुत रात गये तक आउट-डोर शूटिंग पर जाने लगी है। तुम बहुत याद आ रहे हो और तुम्हारे बिना जैसे सन्नाटा छाया रहता है।'

मैंने कई बार उसे पत्र का उत्तर देने के बारे में सोचा, लेकिन हमेशा यही सोचकर रह गया कि मेरे पास उस 'यौवन-जल' की एक बूंद भी नहीं है, जो उसे पिलाकर उसके होंठो की मुस्कान को ही अमर बना सकूं। वह मज़दूर गोष्ठियों में सम्मिलित होता है, राज-नीतिक सभाओं में भाग लेता है, लेकिन उसकी बेकारी उसे ऐसे गुनाह के समान खा रही है, जिसके कारण न तो वह इस दुनियां में खुशी से जी सकता है और न स्वर्ग की सुखम कल्पना कर सकता है और उसके चारों ओर नरक की आग के शोले सांप की तरह लहरा रहे हैं और प्रति क्षण उसे डसने के लिये तैयार हैं। यद्यपि मैंने उसे पत्र का उत्तर नहीं दिया, किन्तु मैं ने उसे अपनी कल्पना में कई बार देखा है। वह अपने कमरे में दीवार पर लटके अपनी पहली प्रेमिका के चित्र को देख रहा है, जिसमें उसकी प्रेमिका अपनी गोद में

उसकी सब से छोटी भतीजी उठाये उसकी ओर मुस्कराते हुए देख रही है। वह हमेशा उसकी ओर ऐसे ही देखती रहती है और मुस्कराती है। उसने कई बार चाहा कि वह उसे इस प्रकार न घूरा करे, क्योंकि अब उसकी गोद में उसकी खूबसूरत भतीजी नहीं, बल्कि उसकी प्रेमिका की अपनी कुरूप और जन्म की रोगी बच्ची है, जो अपनी मां के जज़्बात पर टूटने वाले सितम की कहानी बन गयी है। वह पटियाला या देहली में लालटेन की बीमार पीली रोशनी में उसे दूध पिला रही है और उस कहानी के सो जाने का इन्तज़ार कर रही है। मेरे दोस्त के सीने में एक कसक चुभती है और वह मुझे पत्र लिखने बैठ जाता है। सारा दिन धूप और धूल में मारे २ फिरने के बाद—उसने कई दिन से खाना नहीं खाया है—बाहर चांदनी में मूंगफली के पौधों पर कोमल फूल खिल रहे हैं, जिन पर सुनहरे डोरे खिंच रहे हैं, वायुमंडल में टमाटरों की कच्ची-कच्ची सुगंध घुल रही है, भीतर सीले हुए कमरे में वह मच्छरों का भोंडा संगीत सुन-सुन कर ऊब गया है। उसकी प्रेमिका उसी तरह उसकी ओर देख रही है और मुस्करा रही है। मेरा दोस्त उस चित्र को खिड़की से बाहर फेंकने के लिये उठता है। उसकी आंखें आंसुओं से बोझल हो जाती हैं और वह चित्र को वहां से नहीं उठाता। उसके हृदय में अभाव का घाव सदैव हरा रहता है। वह जीना चाहता है, भविष्य के स्वप्न देखना चाहता है—और धूप में वीरान सड़कों पर जीविका की खोज में घूमता है। इसी खोज में किसी उदास मोड़ पर उसे जूलियट मिल जाती है—इस से आगे मैं कल्पना नहीं कर सकता। लेकिन पूरे विस्तार के साथ उसके चित्र देख सकता हूं। शायद इसका कारण वह संयुक्त पीड़ा है, जो धीरे २ हमारी रगों में समा रही है और जिसकी दवा न उसके पास है, और न मेरे पास है।

मैं इसी तरह उसके बारे में सोचता रहता। एकाएक एक दिन मुझे ध्यान आया कि मैंने उसके किसी पत्र का उत्तर नहीं दिया—यह एक ऐसी मनोस्थिति का अनुभव था, जैसे आदम को स्वर्ग से निकालने के जुर्म में ईश्वर को हुआ होगा। मैंने उसे पत्र लिखने की चेष्टा की लेकिन अन्त में जाने किस भाव के अन्तर्गत मैं उसके काल्पनिक चित्र देखता हुआ पूना चला गया। मैं उसके कमरे में अचानक दाखिल हुआ। उसने मुस्कराने की चेष्टा की, किन्तु वह मुस्करा न सका। वह मुझ से लिपट कर रोने लगा। मेरे मन में कई प्रश्न उठे, लेकिन सब जैसे भूल से गये।

—मेरे दोस्त, मेरे अच्छे दोस्त! तुम यहां क्यों आये? तुम मेरा गला घोंट दो! मैं आत्म हत्या नहीं कर सकता! मैं कायर हूं!—उसने मेरे हाथ अपनी गर्दन पर रख लिये। मैंने उसके गालों पर आंसुओं की बूंदों को अपनी उङ्गलियों से पोंछा, उसे पास बैठा लिया वह कुछ क्षण मौन रहा—वह बहुत कुछ कहना चाहता था, लेकिन कैसे कहे? उसके मन में ज्वार भाटा उठ रहा था।

—यहां क्या कर रहे हो? मैंने बहुत ही सीधे-सादे सवाल पूछने शुरू किये।

—कुछ नहीं—बेकार हूँ।—थोड़ी देर मौन रहने के बाद वह चिल्लाने लगा—मैं यहां नहीं रह सकता! देखो मेरे हाथों में ताकत है मैं जवान हूं, सुन्दर हूं और मुझे काम नहीं मिलता? मेहनत मज़दूरी का भी नहीं। मैं दो महीने से अपने दोस्त के यहां रह रहा हूं। वह मुझे अच्छे अच्छे होटलों में खाना खिलाता है, चाय पिलाता है, जेबखर्च देता है—लेकिन मैं यहां नहीं रह सकता, नहीं रह सकता! मैं मर जाऊंगा, लेकिन...वह घुटनों में सिर देकर बैठ गया।

—कौन है तुम्हारा दोस्त ?

—रमता...वह साइकिलों के आर्मेचर चुराता है, उन्हीं होटलों के बाहर से जिनमें हम डिनर खाते है।

मेरे दोस्त के हृदय में कांटे की सी चुभन हो रही थी। उसके हाथों में बल है, वह जवान है, वह खूबसूरत है, वह काम चाहता है—साधारण काम—साधारण मज़दूरी करने वाला काम। और उसे यह काम भी नहीं मिलता। यद्यपि उसके पास बोतलों में नये स्वाद भरने के अनेक दुर्लभ फ़ार्मूले हैं।

हम दोनों काफ़ी देर मौन रहे। मैंने उसका ध्यान मानसिक पीड़ा से बचाने के लिये कहा—यह जूलियट कौन है?

—एक लड़की है। ईसाई लड़की! लड़की नहीं, उसकी टूटी हुई प्रतिमा है। उसे देख कर मुझे कई बार लड़की और औरत के भेद के बीच झूलना पड़ा। अचानक यह टूटी हुई प्रतिमा मेरे निकट आयी—हां, मेरे निकट आयी। मैं उसके पास नहीं गया। उसने मेरे घाव पर प्यार से होंठ रख दिये। उसका रंग सांवला है और उसमें उसके चेहरे के चुभते हुए नक्श इस तरह घुले-मिले हैं कि बार-बार देखने को जी चाहता है।

—क्या करती है?

—पैलेस हाइट में काउन्टर गर्ल थी।

—अब क्या करती है?

उसके चेहरे पर एकदम बादल से छा गये।

—आउट-डोर शूटिंग!

—आउट-डोर शूटिंग?

उसने मेरे चेहरे पर निगाहें गाड़ दीं—लेकिन उसकी आत्मा में मेरे लिये प्यार है...आउटडोर शूटिंग उसका पेशा है।

जूलियट के लिये उसके दिल में बहुत गहरा प्यार था। प्रेम में कितना सुख था! प्रेमिका की याद और मित्र की संगति...कितने मधुर और कटु थे वे क्षण!

आओ कहीं बाहर चलें...इस कमरे में तो बड़ी घुटन महसूस होती है।—उसने कहा।

—कहां? मैं जानता था कि उसका इशारा उस पुरानी झील की ओर था, जिसके एक ओर से पानी गिरता हुआ बह कर नीचे नदी में मिल जाता है। रात के शायद तीन बज चुके थे, जब हम वहां पहुँचे। रात भरी पूरी थी चांद की चांदनी में, सन्नाटा भरा पूरा था गिरते हुए पानी के गीत में।

वह कहने लगा—रास्ते भर मैं ही बातें करता रहा हूं। तुम कुछ सुनाओ, कैसे बीत रही है ज़िन्दगी?

मैं कुछ क्षण मौन रहा, इसलिए नहीं कि मेरे पास कहने के लिये कुछ नहीं था, बल्कि इतना कुछ था कि समझ में नहीं आता था कि ज़िन्दगी का तार किस जगह से पकड़ा जाये।

—रोज़गार का क्या हाल है?" उसने पूछा।

—चल रहा है।

—क्या कुछ मिल जाता है?

—यही कोई सौ-पचास।

—यानी एक सौ पचास।

—बस यही समझ लो...और कोई बात करो, दोस्त! हम

दोनों कुछ क्षण मौन रहे।

—कुछ रोमांस की सुनाओ।

—हूं !

—हां, तो सुनाओ।

मैंने एक कहानी छेड़ दी। उस में कुछ यथार्थ कुछ कल्पना और कुछ कथा का रंग था।

—सुनो, मैं उसमें रुपये पैसे का ज़िक्र बिल्कुल नहीं करूंगा, नहीं तो सब मज़ा किरकिरा हो जायगा।—मैंने अपनी कहानी में कहीं हलके, कहीं शोख रंग बिखेरने शुरू कर दिये।

अपनी कहानी सुनाकर मैं चुप हो गया। यादें कम थीं, लेकिन कटु अधिक थीं।

—लेकिन उस लड़की का क्या हुआ? उसने अचानक सवाल किया।

—किस लड़की का ?

—जिसके बारे में तुम सब कुछ छिपा गये।

—कौन ?

—नाम मैं नहीं जानता। सिर्फ तुम्हारी आंखों में उसकी थिरकती हुई तस्वीर देख रहा हूं।

आत्मा में गड़ी हुई कील को जैसे किसी ने एकदम झिंजोड़ दिया हो।

—रमनी! मैंने कहा—उससे मिलकर कुछ सुख का, कुछ दुख का अनुभव होता था। जैसे ज़िन्दगी में कोई चुटकी भरके ठहाका बिखेर दे और एक दम दूर भाग जाय। छुन्न! पायल की झन्कार हो

और छन्न से पायल टूट जाय।

—वह अचानक तुम्हारी जिन्दगी में आयी और अचानक चली गयी...कैसे ?—उसने पूछा—क्या उसकी शादी हो गयी ? क्या उसके मां-बाप राज़ी नहीं थे ? क्या उसने आत्म हत्या कर ली ?...क्या वह बेवफ़ा निकली ...?

—कुछ भी नहीं हुआ, मैंने अपनी खाली जेबों में अपने खाली हाथ ठूंस लिये और उसकी ओर देखने लगा।

—हूं !...तुम्हारी खालिस जिन्सी और रूमानी कहानी का परिणाम...—वह किसी सोच में डूब गया। वह इस दर्द को महसूस कर रहा था।

—यह रात, यह चांदनी और गिरते हुए पानी का गीत ! काश, इस क्षण जूलियट मेरे पास होती।

वह थोड़ी देर बाद बोला—आज भूख बुरी तरह सता रही है...तुम चुप क्यों हो ? क्या चुप रहने से भूख मर जाती है ?

हम दोनों एक दूसरे की ओर न देख सके और सामने चनार के पेड़ की ओर देखने लगे। चनार का वृक्ष अपनी बाहें फैलाये धरती की छाती से उभर रहा था। हमारे निकट गिरते हुए पानी का गीत मद्धिम-मद्धिम सुरों में बह रहा था। दूर बांसुरी पर कोई गा रहा था। दिल का दर्द गीत में ढल रहा था। सब का गीत एक था...शायद सब का दर्द एक था !

—बांसुरी की आवाज़ कितनी दर्द भरी है ! शायद कोई विरह का गीत है।—उसने कहा।

—हां।—चनार का वृक्ष देख कर एक कविता याद आ रही थी और मैं हौले हौले गुनगुनाने लगा और वह सामने वृक्ष पर दृष्टि जमाये सुनने लगा :—

चनार का वृक्ष धरती की छाती चीर कर
ऊपर ही ऊपर बढ़ता चला जा रहा है।
धरती के नीचे चनार की जड़ें बहुत गहरी हैं
और उसके पत्ते बुलन्दी पर होते होते
चांदनी की शराब पी रहे हैं।

"—मैं चनार का पेड़ बनना चाहता हूं!!"

वह एक दम एड़ियों के बल खड़ा हो गया और उसने दोनों बन्द मुट्ठियां ऊपर उठायीं और हवा में लटका कर खोल दीं। वह एक क्षण तक ऐसे ही खड़ा रहा और गिरते हुए पानी का गीत धीरे २ उसकी रगों में दर्द बन कर बहने लगा।

जीवन-शून्य और मृत्यु

मैं नया नगर के प्लेटफार्म पर गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहा था। गाड़ी तीन घण्टे लेट थी। चन्द्रपुर के निकट कोई जीव गाड़ी के नीचे आ गया था। यह जीव कोई मर्द था या कोई कुत्ता, कोई स्त्री थी कि गाय, यह अभी तक ज्ञात न हो सका। साईड लाईन पर एक बेकार इंजन बदबूदार धुआं उगल रहा था। लाईन पर इंजन के नीचे गिरे हुए कोयलों को देख कर प्रकाश और गर्मी का अनुभव होता था। दूर कहीं सिगनलों की लाल बत्तियां दृष्टिगोचर होती थीं जो किसी के लम्बे काले कुन्तल पर लाल फूलों की भांति टिकी हुई थीं।

प्लेटफार्म पर एक आवारा कुत्ता सर्दी से बचने के लिये टी-स्टाल के चूल्हे से चिपट कर सो रहा था। बुकस्टाल के साथ एक लम्बी २ दाढ़ी और मैले बालों वाला एक फ़कीर बड़ा सा पुराना कम्बल लिए सो रहा था। बुकिङ्ग क्लर्क भी अपनी लम्बी टांगों वाली कुर्सी पर ऊंघ रहा था। स्टेशन का सारा वातावरण शान्त था। वायु में शीतलता आ गई थी। मैंने ठण्डी हवा से बचने के लिये अपने ओवर कोट के कालर को ऊपर कर लिया और वेटिंग रूम में आ गया। मैं कूपरिन का उपन्यास 'यामा' पढने लगा।

अंगीठी में आग धीमी पड़ चुकी थी। परन्तु मेरे मस्तिष्क में नयानगर के जीवन की भयानक और घोर काली आकृति घूम रही थी। और हज़ारों मनुष्यों की भीड़ में से करीमदीन उभर रहा था। करीमदीन

युद्ध के दिनों में आर्डनेन्स डिपो में क्लर्क था और लड़ाई समाप्त होते ही छांटी हुई तो वह भी उसका शिकार हो गया। वह महीनों नौकरी की तलाश में घूमता रहा परन्तु उसे कहीं भी नौकरी न मिली। निराश होकर उसने अपना नाम एम्पलायमेंट एक्सचेन्ज में लिखवा दिया। परन्तु अभी तक उसका कोई पत्र न आया था। फिर किसी सम्बन्धी की सिफारिश से ज्यूट मिल में नौकरी मिल गई। परन्तु वहां भी अधिक समय न रह सका। क्योंकि ज्यूट मिल के श्रमिकों ने प्रतिदिन की बढ़ती हुई महंगाई से तंग आकर हड़ताल कर दी थी। करीमदीन भी इस में भाग ले रहा था। उसे मिल से निकाल दिया गया और वह फिर से बेकार हो गया। अन्त में कोई राह न देख कर उसने तंग आकर रिक्शा चलाना आरम्भ कर दिया।

जब वह क्लर्क था, उसके पास छोटा सा घर था। जिसमें वह अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रहता था। परन्तु अब उसके पास घर भी न था और उसके कौटाम्बिक जीवन की प्रसन्नतायें समाप्त हो गईं और वह साधारण श्रमिकों की भांति अपना जीवन व्यतीत करने लगा। परन्तु वह अधिक दिन रिक्शा भी न चला सका, क्योंकि कार्पोरेशन ने मानवता के नाते रिक्शा ड्राईविंग पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

करीमदीन फिर बेकार हो गया और जब मैं श्रमिकों के अपार जन समूह को शान्ति, सहन शीलता तथा धैर्य के साथ जीवन बिताने को कह रहा था तो करीमदीन भीड़ को चीरता हुआ मेरे सामने आ खड़ा हुआ। उसकी आंखों में आँसू थे और वह करुण स्वर में गिड़-गिड़ा रहा था। "मेरी एक पत्नी है जो कि इस पापी पेट को भरने के लिये दर दर भटक रही है। मेरा एक लड़का फ़रवर अपने नन्हें हाथों से चाय के बागों में पत्तियां चुन रहा है। और मैंने उसको एक सरदार

के हाथ बेच दिया है।

मैं करीमदीन के चेहरे की ओर देख रहा था, जो भूरा और दुबला था। उसके चेहरे पर झुरियां थीं। उसकी आँखों की चमक में अंधेरा था। मैं उस से आंखें न मिला सका। मेरे मस्तिष्क में एक विचित्र सा ज्वार भाटा उठने लगा और इससे बचने के लिये मैं नयानगर छोड़ने पर तैयार हो गया। परन्तु वह मेरे साथ चिमट कर रह गया।

सहसा मुझे बरामदे में हज़ारों पगों की ध्वनि सुनाई पड़ी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कोई निरंतर घूंसों की वर्षा कर द्वार तोड़ देना चाहता है। मैंने द्वार की ओर देखा। द्वार पर धीमी धीमी थपथपाहट सुनाई दे रही थी। दूसरे ही क्षण एक सलोनी युवती भीतर आई। प्रविष्ट होने पर उसने अपने पीछे दरवाज़े की चटखनी लगा दी। मैंने देखा कि उसके गोरे हाथों में चमड़े का अटेची केस था। अन्धेरी निर्जन रात्री में अकेली युवती देख कर मैं परेशान हो गया। उसकी साड़ी और बलाऊज़ भीगे हुए थे। शायद बाहर वर्षा हो रही थी। उसके बिखरे हुए बालों से पानी की बूंदें टपक रही थीं। उसने झटके से अपने केसों को पीछे हटा दिया। मैंने उसके मुख की ओर देखा उसने मुस्कराने का प्रयत्न किया परन्तु मुस्करा न सकी। उसके होंट हिले जो नीले हो गये थे। उसके मुख पर रक्तिमा नाम को भी न थी। उसका सफेद मुख नीले रंग की चमक लिए हुए था जैसे किसी ने उसका रक्त चूस लिया हो और नीली शिराएं ऊभर आई हों। होटों के स्थान पर उसकी नाक लाल थी जो सिगनल की लाल बत्ती की भांति चमक रही थी और उसकी सफेद आंखों में नीली २ लहरें गतिमान थीं। वह उसके चान्द की भांति दिखाई दे रही

थी जो कि भद्दे जोहड़ में तैर रहा हो। वह मेरी ओर टकटकी लगाये देख रही थी। मैंने उसके मुख से दृष्टि हटा ली। मुझे महसूस हुआ कि किसी ने चान्द के मुख पर दाग़ लगा दिया हो। मैंने उसको झिझकी हुई दृष्टि से देखा। वह एक क्षण के लिये द्वार के साथ पीठ लगाये खड़ी रही और फिर वह मेरी मेज़ के सामने बैठ गई। अपरिचित स्त्री क्षण भर के लिए चुप रही और मेरे जूतों की ओर देखती रही। मैंने अपनी इस अशिष्टता का अनुभव किया और जूते नीचे कर लिये।

—कितना सन्नाटा छाया हुआ है? अपरिचित स्त्री ने निस्तब्धता भंग करते हुए कहा।

—हूं! मैंने उपन्यास पर दृष्टि जमाए हुए कहा।

मैंने उसकी ओर देखा वह अत्यन्त सर्दी के कारण कांप रही थी। 'गाड़ी तीन घण्टे लेट है, चारों ओर अंधेरा है, चुप है, सर्दी है और एकान्त है।' अपरिचित स्त्री, एक सांस में सब कुछ कह गई।

चारों ओर अंधेरा था। चुप थी, सर्दी थी और एकान्त था। अपरिचित स्त्री ने यह बात कुछ ऐसे स्वर में कही थी कि मैं इस में गहराई ढूंढने लगा और मैं ने उसकी ओर देखा, वह पहले की भांति मुस्करा रही थी और कांप रही थी। उसकी आंखें साधारणतया चमक रही थीं। मैंने ऐसी चमक पहले कभी न देखी थी।

औरत और रात, औरत और अकेलापन, औरत और सर्दी, !! मेरे मस्तिष्क में विचारों का चक्कर इस तेज़ी से चला कि मैं निस्तब्ध सा रह गया। उपन्यास के शब्द सामने नाचने लगे और धुंधले होते होते मिट गये। पुस्तक पर उस औरत की तस्वीर उभरने लगी जो सर्दी से कांप रही थी और मुस्करा रही थी। वह मेरे समीप आ रही थी और मेरी कुर्सी के पास आ कर रुक गई।

उसने ज़ोर से अट्टहास किया। मैंने उसकी ओर देखा। वह कुर्सी पर बैठे पहले की भान्ति मुस्करा रही थी। मेरे माथे पर पसीने की बूंदें आ गईं। मैं अपनी झेंप को मिटाने के लिए रोमाल से अपना मुंह पोंछने लगा।

'आप कहां जा रहे हैं?' उसने मुझे खोया हुआ देख कर कहा। मेरे मुंह से कोई शब्द न निकला। मैं ने उपन्यास पढ़ने का प्रयत्न किया। परन्तु शब्द मेरी आंखों के सामने नाच रहे थे। मैंने इधर उधर कुर्सी पर करवट बदली। परन्तु उसका ख्याल अपने मन से न जा सका। वह मेरे सामने बैठी रही और कांपती रही। मैंने उसके विचार को मन से हटाने के लिये सिगरेट की डिब्बिया निकाली ताकि सिगरेट के धुएं में उसका उभरता हुआ चिन्ह धुंधला पड़ जाये। मैंने उसकी तरफ़ जिज्ञासु दृष्टि से देखा। वह क्लाक की सूईयों की गति को ध्यान पूर्वक देख रही थी।

'अगर आप के पास कोई फ़ालतू सिगरेट हो तो..........!' औरत ने धीरे स्वर में कहा।

'—सिगरेट' मैंने हकलाते हुए कहा और सिगरेट की डिब्बिया तथा दियासलाई उसकी ओर बढ़ा दी।

"रात काफ़ी सर्द है।" उसने सिगरेट सुलगाते हुए कहा। वह सिगरेट का धुआं कुछ इस प्रकार से निकालने लगी जैसे अपने मन से कोई भारी बोझ निकाल कर फेंक रही हो।

"वह कौन सी किताब है?" उसने पुस्तक में दिलचस्पी लेते हुए कहा।

"यामा।" मैंने पुस्तक उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा।

"यामा दी हैल............दी हैल..........!" इन शब्दों को उसने कई बार दोहराया। "यामा, केवल मगटालियों में ही उपस्थित

नहीं बल्कि हर मनुष्य के मस्तिष्क में है।" मैं मौन रहा। वह निरन्तर सिगरेट पी रही थी। उसके होंटों की मुस्कान लुप्त हो चुकी थी और गम्भीरता की रेखाएं उजागर हो गई थीं। शायद सिगरेट की गर्मी उसके शरीर की सर्दी को दूर न कर सकी थी। उसने भीगा हुआ ब्लाऊज़ और भीगी हुई साड़ी पहनी हुई थी। और मैं अपने ओवर कोट में दुबका हुआ बैठा था।

"आपको काफ़ी सर्दी लग रही होगी।" मैंने ओवर कोट उसे उतार कर दे दिया। मेरा हाथ उसकी उङ्गलियों से छू गया। उसकी उङ्गलियों से आग निकल रही थी। वह बीमार प्रतीत होती थी। 'आप बीमार हैं।' मैंने उसके शरीर पर ओवर कोट फैलाते हुए कहा।

'हलकी सी हरारत है।' वह फिर मौन हो गई। वह मेरी तरफ़ देखने लगी जैसे मुझे पहचानने का प्रयत्न कर रही हो; मेरे पास ब्रांडी की आधी बोतल पड़ी थी। मैंने बोतल निकाली और एक घूंट उस को दिया। उसने पिया और कृतज्ञता पूर्ण दृष्टि से मेरी तरफ़ देखा जैसे मैंने उसे जीवन का रस पिलाया हो।

"तुम्हारा क्या नाम है?" मैं उसके और अपने बीच से अपरिचित दीवार को हटाना चाहता था। मैंने देखा उसकी मुस्कान दर्द भरी थी। सम्भवतः मुस्कान उसकी आदत बन चुकी थी।

"तुम्हारा क्या नाम है?" मैंने फिर पूछा। इतनी देर से प्रश्न पूछने पर उसकी महत्ता समाप्त हो चुकी थी।

"मेरा कोई नाम नहीं और फिर स्त्री का नाम तो सदैव बदलता रहता है" उसने उदासी से कहा।

"फिर भी कोई नाम तो होगा!" उसने सिर उठाया और मेरी तरफ़ देखा। उसकी आंखों में चमक उत्पन्न हुई और दूसरे ही क्षण समाप्त हो गई। इस चमक और पहली चमक में बहुत अन्तर

था। पहली चमक बिजली की थी और दूसरी बुझते हुए दीपक की। वह उदास हो गई। शायद उसे मेरे प्रश्न से दुःख पहुँच रहा था या कोई सोया हुआ दर्द जाग उठा था। मैंने पहली बार अनुभव किया कि उसकी सारी मुस्कान और सारी चपलता किसी महान वेदना को छिपाने का व्यर्थ प्रयास था। मैं उससे कोई दूसरा प्रश्न पूछने का साहस न कर सका।

उसकी आंखें बन्द हो रही थीं। उस पर निस्तब्धता सी छा रही थी। ब्रांडी का घूंट अपना प्रभाव दिखा रहा था। मैंने उसकी नाड़ी टटोली। ज्वर अधिक था। उसने मेरे हाथ का स्पर्श अनुभव किया और आंखे खोल दीं। उन आंखों में प्रेम, सहानुभूति और कृतज्ञता के भाव मिले हुए थे। उसकी आंखें नींद से भारी हो रहीं थीं। सम्भवतः वह कई रातों से सोई न थी। उसने आंखें बन्द कर लीं और मुंह दूसरी ओर कर के सो गई।

यामा पढ़ते २ मैं ऊंघ गया। टन टन घन्टी ने दो बजाए और मेरी आंख खुल गई। गाड़ी के आने में पंद्रह मिनट बाक़ी थे। उस का कुर्सी खाली पड़ी थी। मैंने इधर उधर देखा वह कहीं न थी। मैंने बरामदे में देखा वह वहां भी न थी। मेज़ पर ब्रांडी की बोतल खाली पड़ी था। और सिगरेट की डिब्बा भी खाली थी। अपरिचित स्त्री नौ सिगरेट पी कर जा चुकी थी। मैंने दोनों खाली चीज़ें उठा कर अपने बक्स में रख लीं।

सहसा द्वार पर हलकी सी थपथपाहट हुई और मैं चौंका। सफ़ेद हाथ दिखाई दिया जिस पर नीली २ हल्की रेखाएं उभरी हुई थीं। वह वही स्त्री थी। वह कमरे में आई। उसके हाथ में अटेचीकेस था। और दूसरे में मेरा ओवर कोट। वह मुस्करा रही थी। परन्तु यह मुस्कान दुःखदायक न थी। पवित्र, निर्मल, और निर्विकार मुस्कान

थी। उसकी शून्य सी आंखों में चमक थी जैसे उसने जीवन में कोई अत्यन्त प्रिय वस्तु पा ली है। वह सीधी मेरी कुर्सी के पास आ कर रुक गई। उसने मेरे ओवर कोट को मेरी गोद में फेंक दिया और मेरे मुख की ओर कृतज्ञता की दृष्टि से देखने लगी।

"आप को इसका प्रतिफल चाहिए।" उसकी गर्म २ निश्वास मेरे गालों से टकरा रही थी और उसके मुंह से ब्रांडी की गन्ध आ रही थी।

"प्रतिफल !"………मैं चौंका। उसने ऊंचे स्वर से ठहाका लगाया।

"आप अच्छे हैं !" उसने मेरा हाथ अपने हाथों में लेते हुए कहा। उसके मुख पर उदासी की लकीर अधिक गहरी हो गई। उसकी आंखों की चमक लुप्त हो गई और उसका मुख पहले की अपेक्षा अधिक सफ़ेद हो गया था।

"तुम उदास क्यों हो ?" मैंने पूछा।

"मैं आपकी अत्यन्त आभारी हूं।" उसने यामा की ओर देखा और फिर मेरी तरफ़ देखा और मुस्करा दी।

"यह खाली बोतल और खाली डिब्बा मुझे दे दें। आप के किस काम की।" उसने कहा।

मैं उसके इस प्रश्न पर चकित रह गया था। मैंने दोनों चीज़ें निकाल कर उसे दे दीं।

"बहुत सतर्कता से रखीं हैं आपने।" उसने दोनों चीज़ें अटेचीकेस में रख लीं। दरवाज़े से निकलते हुए उसने विचित्र स्वर में "खुदा हाफ़िज़" कहा और तेज़ी से बाहर निकल गई।

गाड़ी के जाने की घण्टी बज चुकी थी। शायद गाड़ी आ चुकी थी। मैंने शीघ्रता से अपना ओवर कोट उठाया, बक्स को हाथ में लिया और वेटिंग रूम से बाहर जाने लगा। मेज़ पर 'यामा' रह गई थी! मैं वापस पलटा और उसे ले कर चलने लगा। फिर विचार आया उसे बक्स में रख लेना उपयुक्त होगा। मैंने चाबी के लिये ओवर कोट की जेब में हाथ डाला तो चाबी के स्थान पर एक मुड़ा हुआ पत्र हाथ में आया। मैंने उसे बाहर निकाला तो वह सिगरेट की डिब्बिया के अन्दर एक काग़ज़ था। मैंने काग़ज़ को परे फेंक दिया परन्तु फिर किसी विचार से मैंने उसे उठा लिया। उसे खोला। काग़ज़ पर टेढ़े मेढ़े शब्दों में लिखा था।

"अपरिचित राही"।

आप बहुत अच्छे हैं। मुझे सर्दी से बचाने के लिए आप स्वयं ठिठरते रहे। परन्तु यह शीत, अन्धकार और मौन मेरे जीवन पर छा चुके हैं तथा तग अन्धेरी और शिथिल क़बर में भी मेरे साथ जायेंगे............नीलम।

उसका नाम नीलम था! पत्र पढ़ते ही मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि नीलम क्षण प्रतिक्षण मृत्यु की ओर बढ़ रही है। प्लेटफार्म पर नीलम कहीं भी दिखाई न पड़ती थी।

लम्बी २ दाढ़ी और बालों वाला फ़कीर गाड़ी की आवाज़ सुनकर उठ बैठा था। वह मेरी ओर ऐसे देख रहा था जैसे कह रहा हो मेरे पास आओ मूर्ख मैं तुम्हें बताऊंगा कि नीलम कहां है! मैं फ़कीर के समीप गया और उससे नीलम के विषय में पूछने लगा। "तुम जानते हो नीलम कहां है?" उसके गन्दे कपड़ों से दुर्गन्ध आ रही थी।

उसकी मलिन मुद्रा देख कर मुझे परेशानी हो रही थी।

'नीलम' बूढ़े फ़कीर ने अपने मैले दांत निकालते हुए कहा। "मैंने नीलम के पैदा होते ही गला घोंट दिया था।" उसने अपने दोनों हाथों की उङ्गलियों को जोड़ते हुए कहा। जैसे सचमुच किसी का गला घोंट रहा हो। वह अपने दांत चबा रहा था जैसे मुझे भी चबा डालने का विचार रखता हो। उसकी वेशभूषा देख कर मुझे भय आने लगा। वह पागलों की तरह चिल्ला रहा था। मैं उसको उस दशा में छोड़ कर आगे बढ़ गया। उसके ठहाके निस्तब्ध वातावरण को चीरते हुए मेरा पीछा कर रहे थे।

कुछ लोग एक गाड़ी के समीप खड़े थे। सम्भवतः यह गाड़ी अभी अभी आई थी और लोग एक स्त्री के शव के चारों ओर खड़े कह रहे थे कि उन्होंने इसे आधी आधी रात को प्लेटफार्म पर घूमते हुए देखा था।

मैं कुछ क्षणों तक उसके हिम जैसे सफ़ेद शिथिल मुख की ओर देखता रहा जो अब खून बहने के कारण लाल हो गया था। लोग पूछ रहे थे कि क्या वह स्त्री मेरी परिचित या सम्बन्धित थी। परन्तु मैं मौन रहा। लोग धीरे धीरे सहानुभूति प्रकट करके चले गये।

शव के पास दो सिपाही और एक लाल वर्दी वाला कुली रह गया था। गाड़ी जा चुकी थी। दूर सिगनल पर एक क्षण के लिए हरी बत्ती चमकी और फिर लाल बत्ती में परिणत हो गई। लाश के निकट ही उसका अटेची केस भी पड़ा था। पुलिस वाले उसका अटेची केस खोल रहे थे। मैं उनके समीप जा कर देखने लगा। शायद मैं नीलम के विषय में कुछ जान सकूं! अटेची केस में पाऊडर

के खाली डिब्बे और तेल की खाली शीशियां और इस प्रकार के खाली डिब्बे और कई वस्तुएं थीं। सब के ऊपर ब्रांडी की खाली बोतल और सिगरेट की खाली डिबिया पड़ी हुई थी और अटेची केस के ऊपर लिखा हुआ था।

"करीमदीन"

मेरे मस्तिष्क में नयानगर का सारा जीवन घूम गया और मैं इस युवती के बारे में सोचने लगा।

उसके जीवन में एक अमिट शून्यता उत्पन्न हो गई थी और जोकि इसके सारे जीवन पर छा गई थी। और वह शून्यता से बचने के लिए आधी २ रात तक सर्दी से ठिठरती रही और अन्धेरे में भटकती हुई इस निर्जन प्लेटफार्म पर घूमती रही। परन्तु यह शून्यता न मिट सकी और वह स्वयं मिट गई।

आनन्दा

"आनन्दा मर गया !"

सस्ते सिगरेट पीने और घटिया रेस्तरानों में चाय के प्याले खाली करने और बिजली की ज़हर उगलती रौशनी में मोटी मोटी पुस्तकें पढ़ने के बाद आनन्दा किसी भी क्षण मर सकता था और यह कोई आश्चर्यजनक बात न होती। लेकिन आश्चर्य तो यह था कि मोर की दृष्टि अपने पांव पर पड़ गई और बुलबुल के कंठ में गुलाब के फूल का कांटा चुभ गया। रंग बिखर गया। नग़मा गुंग हो गया और सुगंध उड़ गई। क्योंकि दीपा के विचार में आनन्दा नज़र की वह तार थी जिस में दिलों से चुराये हुए मोती पिरोए रहते थे।

दीपा को यह ख़बर आज मिली और आज ही उसकी शादी की पहली वर्षगांठ है। उसकी शादी से पहले दिन जब आनन्दा उससे मिला था तो दीपा ने उससे कहा, "आनन्दा, यह शादी अब नहीं रुक सकती। मगर तुम खामोश क्यों हो ?" और वह सिसक २ कर रोने लगी आनन्दा ने अपने उसी लाऊबालीपन से उत्तर दीया। "प्रिय ! प्रेम में तुम्हारी आंखें नरगिस के फूल की तरह सुन्दर हैं और तुम्हारे होंठ गुलाब की पत्तियों की तरह कोमल। लेकिन शादी में तुम्हारी आंखें केवल आंखें होंगी। जिन में कभी घृणा झलकेगी और कभी सन्देह का विष और तुम्हारे होंठ केवल होंठ होंगे जिनका स्पर्श विषाक्त भी हो सकता है।"

दीपा चिल्लाई—"आनन्दा तुम यह सोचते हो।"

"दीपा, यह भ्रम का सत्य हो, या सत्य का भ्रम समझ लो लेकिन......... " वह खिलखिला कर हंसा और सिगरेट सुलगाने लगा।

"—तुम इतना अधिक सिगरेट क्यों पीते हो। डाक्टर ने मना कर रखा है। तुम्हें सांस का रोग है"।

"—मेरे अन्दर ज़हर की कमी है।"

दीपा आनन्दा के चेहरे पर धुंयें के बादल उड़ते हुए देखती रही।

आनन्दा अपने रोग का ज़िक्र कुछ इस अंदाज़ से करता था, जैसे वह अपनी नयी कविता सुना रहा हो। उसे याद आया कि आनन्दा ने उसे एक बार कहा था मैंने आंसू की प्रत्येक बूंद में एक कविता की रचना होते देखी है! "आनन्दा यह ज़ख्म कारी होगा!" दीपा ने कहा।

"—हर आदमी के जीवन में एक क्षण ऐसा आता है जब वह अपनी अनुभूति के निशतर से अपने दिल के नये पुराने दाग कुरेदता है और देखता है कि कितने ज़ख्म ऐसे हैं जिन से फूल खिलाए जा सकते हैं और कितने ऐसे हैं जिन से दीप जलाए जा सकते हैं। और कितने ज़ख्म ऐसे हैं जो केवल ज़ख्म हैं और जिनसे व्यर्थ ही खून बहा है। शादी एक ऐसा ही ज़ख्म है प्रिय।"

आनन्दा ने उसके मेघ जैसे काले बालों में फूल टांकते हुए कहा—"मैं तुम्हारी शादी की पहली वर्ष गांठ पर अवश्य आऊंगा।

तुम्हारे होठों की मुस्कान खिलते हुए देखने के लिए।" और आनन्दा अपने पांव तले सिगरेट मसलते हुए चला गया।

आज वह क्षण आ गया है। जबकि दीपक अपने ज़ख्मों को अनुभूति के निशतर से कुरेद सकती है। यह ज़ख्म जो उसने प्रत्येक उस क्षण में खाये हैं जो उसके पति के लिये बड़े मादक थे। जब वह अपने पति के साथ हनीमून मनाने कश्मीर की सौंदर्य बखेरती चोटियों में घूमने गई थी तो वह अकस्मात उस स्थान पर पहुँच गई जहां वह कभी आनन्दा के साथ आई थी। "मन चाहता है कि यह बर्फीली चोटियां अपनी छाती पर रख लूं।" दीपा ने कहा। "तुम कभी कभी विचित्र बातें करती हो दीपा—" उसके पति ने कहा। यही बात उसने आनन्दा से कही थी। आनन्दा ने उसकी कमर में हाथ डालते हुए कहा था—'लेकिन मैं डरता हूं कि यह बर्फ़ कहीं पिघल न जाये और तुम्हारी दबी आग फैल न जाये।'

दीपा उस समय आनन्दा से विभोर हो झूम उठी थी। वह यह सोच कर उदास हो गई। उसका पति कह रहा था, 'बर्फ़ से लदी हुई चोटियां कितनी सुन्दर लगती हैं'। और उसने एक भद्दी सी हरकत की। वह एम० ए० की टैक्स्ट की पुस्तकों से रटी हुई उपमाएं दोहराने लगा और दीपा सोच रही थी और प्रकृति का सौंदर्य मर रहा था। उसके विचार में प्रत्येक मनुष्य प्रकृति को अपनी अनुभूति में सत्य करके पेश करता है। और जो इस अनुभूति से वंचित हो वह टैक्स्ट की पुस्तकों से रटे हुए वाक्यों द्वारा अपना प्रेम प्रकट करता है। दीपा को इससे घृणा थी वरना आनन्दा एक दुबला पतला छोटे क़द का आदमी है जिसकी आंखों के गिर्द मोटे शीशे वाला चश्मा था। जिसके माथे पर बाल हमेशा उलझे रहते थे। लेकिन आनन्दा—बस आनन्दा

था जो कि केवल वही हो सकता था।

काश्मीर से वापसी पर वह ताजमहल देखने गई। उसका पति कहने लगा।

"—ताजमहल दो प्रेम में डूबी हुई आत्माओं की अमर स्मृति है। संगमरमर में एक दिव्य स्वप्न।"

दीपा ने भी एक पुरानी बात दोहराई......"यदि मेरी मृत्यु पर तुम भी ऐसी ही अमर स्मृति का निर्माण करो तो मैं अभी मरने के लिये तैयार हूं।" और उसका पति उसकी ओर ज्योतिहीन आंखों से देखने लगा। पिछले वर्ष शरद पूर्णिमा की रात को वह आनन्दा के साथ जब आई थी तो उसने यही बात कही थी और आनन्दा एक दम जैसे स्वप्न से चौंक पड़ा— "क्योंकि ताजमहल मेरे प्रेम से अधिक सुन्दर है।"

दीपा के दिल में रोशनी की किरण फूट उठी और उसने आनन्दा की बड़ी बड़ी आंखों में देखा जहां ताजमहल के खण्डर नज़र आ रहे थे।

क्लाक ने छः बजाये और आधे घण्टे बाद उसका पति आ जायेगा। दीपा की दृष्टि सहसा क्लाक की सूइयों पर जम गई। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि उसके जीवन का एक २ क्षण क्लाक की सूइयों का गुलाम है। इसलिये उसने कभी घड़ी नहीं लगाई। आनन्दा को घड़ियों से कितनी घृणा थी। जब भी दीपा उससे देर से आने की शिकायत करती और कहती—

"तुम एक घड़ी क्यों नहीं खरीद लेते? आनन्दा!"

"क्यों! आनन्दा ने अबोध बालक की तरह कहा।"

"क्योंकि तुम आज्ञा या करो।"

"—अहो! बात वास्तव में यह है दीपा, जब दिल की धड़कन ज़रा तेज़ होती है तो जल्दी आ जाता हूं और जब ज़रा मद्धिम होती है तो देर से आता हूं। दिल की धड़कन तो सुईयों की गुलाम नहीं रह सकती। ज़रा सोचो यह भी क्या जीवन है। कि आदमी घड़ी की सूइयों के साथ साथ हरकत करे। हम आदमी हैं! मशीन नहीं कि जीवन का प्रतिक्षण ठीक समय के साथ चले। कभी कभी भटक जाना। कभी मद्धिम कभी तेज़।"

"—तुम अबनार्मल हो। आनन्दा!"

"—लेकिन घड़ी तो नहीं"—वह खिलखिला कर हंसा। इस तरह केवल वही हंस सकता था। उसके बारे में उसके किसी मित्र ने कहा था कि तुम्हारे ठहाके कृत्रिम होते हैं। —खोखले—तो वह ज़ोर से ठहाका लगा के हंसा। जो केवल वही लगा सकता था जिसके दिल में धड़कन हो जो कभी मद्धिम हो जाती है और कभी तेज़ और जिसके दिल की गति घड़ी की भांति निरन्तर एक ही गति से चलने वाली नहीं। आनन्दा ऐसे जीवन को खोखला समझता था—कृत्रिम। आज दीपा के दिल की धड़कन कितनी तेज़ थी। पूरे एक वर्ष की मद्धिम धड़कनों के बाद उसकी दृष्टि क्लाक की सूईयों पर जमी हुई थी। उसके मन में आया कि वह उस क्लाक को उठा कर खिड़की से बाहर फेंक दे और टुकड़े टुकड़े कर दे और समय को हवा में भटकता देखे और अपने जीवन को एक बार फिर अपने दिल की धड़कनों से एक स्वर कर दे। मगर वह चुपचाप मौन लेटी रही......दिल की धड़कनें......आनन्दा के दिल की धड़कन एक दम बंद हो गई। और उसके बिना जीवन केवल समय का गुलाम है। एक क्लाक की

निरन्तर टन टन का।

और इस निरन्तर टन टन में उसे अपने उलझे हुए बालों को सवारना है। नए रेशमी वस्त्र पहनने हैं और गालों पर पाऊडर और लाली की तेह जमाना हैं और साढ़े छः बजे जब उसका पति आयेगा तो मुस्करा कर उसका स्वागत करना है।

वह आईने के सामने आ खड़ी हुई। मगर आईने में उसकी आंखों में आनन्दा मुस्करा रहा था। जैसे कह रहा हो।—'तुम्हें विश्वास हो गया कि मैं मर गया हूं।" और फिर ज़ोरदार ठहाका। स्वप्न की भांति दीपा अपनी ही आंखों की छाया में लोटस पांड का दृश्य देख रही थी जिसके किनारे पूर्णिमा की रात को आनन्दा ने कहा था।

"—दीपा कोई गीत सुनाओ।"

'—गीत !' वह कुछ क्षण मौन रही फिर गीत स्वयं ही उसके होंठों से निकलने लगा। वह हौले हौले स्वर में गीत गाने लगी। ऐसा गीत जो उसने पहले कभी न गाया था और शायद उसके बाद फिर कभी न गा सके।

"—कोई भी सितार किसी भी मिजराब से छेड़ी जा सकती है। लेकिन जीवन का एक विशेष संगीत होता है जिसे छेड़ने के लिए प्रत्येक सितार के लिए एक विशेष मिजराब होती है।" —आनन्दा ने दोनों हाथों से उसका चेहरा थाम लिया। दीपा की आंखों में एक कविता की रचना हो रही थी और आनन्दा उसकी जांघों पर सिर रख कर लेट गया।

"—दीपा मैं सोचता हूं कि हम सब मिलकर जीवन सागर का मंथन कर रहे हैं। और इसका अमृत मोहनी बन कर देवताओं में बांट रहे हैं। लेकिन हर अमृत मंथन के बाद तक ऐसे आदमी की तलाश होती है जो इसका विष एक मुस्कराहट के साथ पी सके। मैं चेहरे नहीं

पढ़ सकता । मैं आंखों की गहरायों में नहीं डूब सकता । मैं हर आदमी का गला देखता हूं। कि इस में वह नीलापन है कि नहीं जो केवल विष पीने से ही उपलब्ध होता है।"—और फिर आनन्दा खामोश हो गया। लोटस पांड की तरह मौन और निस्तब्ध । वह नीले आकाश पर दूर दूर तक फैले हुए सितारों को देखता रहा। उसकी आंखों में कमल फूलों की तरह स्वप्न तैर रहे थे। वह सारी रात इसी तरह मौन लेटा रहा। जब उषा की पहली किरण ने उसके शरीर का स्पर्श किया तो वह उठा।

"—दीपा मुझे ऐसा महसूस हो रहा है जैसे मैं सैनीटोरियम से वापिस आ रहा हूं।" और दीपा को ऐसा महसूस हुआ जैसे वह सैनीटो-रियम जा रहा है। और आज जब उसे नर्स ने बताया कि आनन्दा मर गया। मरने से कुछ समय पहले वह बिल्कुल मौन रहा। उसकी आंखों में जैसे भूले हुए चित्र तैर रहे थे। उसके होंटो पर ऐसी मुस्कराहट थी जो युद्ध क्षेत्र में कारी घाव खाने के बाद सिपाही को अपनी विजय का समाचार मिलने पर थिरकती हुई मालूम होती है।

"—आनन्दा!" नर्स चिलाई।

आनन्दा ने उसे अपने निकट बुलाया।

"—मेरा मर जाना ही अच्छा है। जब मैं अबनार्मल हूं। देखो न जब मैं बैठता हूं तो कुर्सी पर टांगें सिकोड़ कर बैठता हूं। मैं चाय में दूध कम और शक्कर के चार चमचे मिला कर और फिर उसे ठंडा करके पीता हूं और खूब पीता हूं। मैं भरी महफल में ठहाका लगा कर हंसता हूं और किसी की उङ्गली पर घाव देख कर पूछ लेता हूं कि चोट दिल पर तो नहीं लगी.........।"

"—तुम्हारी आंखों में आंसू? मैं समझता था कि हिम जैसे सफ़ेद

वस्त्रों में नर्स का दिल भी—हिम जैसा होता है।"

—नर्स ने जवाब दिया—"तुम मेरी आंखों में क्या देख रहे हो ?"

"—एक कविता की रचना !"

"एक कविता की रचना !" और आनन्दा ने करवट बदली और दम तोड़ दिया।

एक कविता की रचना। आनन्दा मर गया। जब वह मरा तो उसके सरहाने मेज़ पर गुलाब का एक फूल, एक पुस्तक और बच्चे का एक चित्र था।

दीपा आईने के सामने खड़ी शृङ्गार कर रही थी।

"—आनन्दा, तुमने कहा था कि तुम मेरी शादी की पहली वर्षगांठ पर अवश्य आओगे। तुम आए मगर अपने अन्दाज़ में—अब-नार्मल। मैंने वायदा किया था कि मैं अवश्य मुस्कराऊंगी—मगर अपने अन्दाज़ में !" और दीपा फूट २ कर रोने लगी। टन। क्लाक ने साढ़े छः बजाए। और वातावरण में हल्का सा स्वर उभर कर डूब गया और उसी क्षण बालों में लगाने वाले फूल पर दीपा के दो आंसू हिमकण की तरह टप से गिरे।

जेबकतरे

प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने देहली के हर उस स्थान पर रमानाथ की खोज की, जहां मोटे अक्षरों में लिखा था, 'पाकट मार से होशियार रहो'। स्टाक-एक्सचेंज, रेलवे स्टेशन, माल गोदाम, पोस्ट आफिस, सेन्ट्रल बैंक, मोती, प्लाज़ा, चाँदनी चौक, कनाट प्लेस, तात्पर्य यह कि दिल्ली के प्रत्येक भाग में प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप सुबह से ही रमानाथ की खोज में घूमता रहा। करीब बारह मील के लम्बे सफर के बाद रात के साढ़े नौ बजे वह रीगल सिनेमा के साइकिल-स्टैंड पर आकर बैठ गया और सोचने लगा कि यदि रमानाथ उसे न मिला, तो वह कल तक के लिए कैसे जीवित रहेगा। आज वह संगीत महाविद्यालय से निकाल दिया गया था, क्योंकि उसने वहा पिछले तीन महीने का अपना वेतन मांगा था। वह स्वयं तो यार-दोस्तों की दया पर जीवित रह सकता था, लेकिन आज उसे सूचना मिली थी कि उसकी छोटी बहन सख्त बीमार है, उसे न्यूमोनिया हो गया है। वह उसे बचाना चाहता था यदि वह मर गयी, तो उसके सब सपने समाप्त हो जायेंगे। वह कैसे कैसे स्वप्न देखता था! वह सितार बजाया करेगा उसकी बहन अपने कोमल पाँवों से नाचा करेगी। उसके शरीर में कितनी लचक है! उसके पाँवों में कितनी थिरकन है! उसके अंग-अंग में नृत्य की तरगें हैं, जो उसके सितार की धुन से हरकत में आ जाते हैं। वह सितार का माहिर है। नृत्य और संगीत का यह सुन्दर संगम... उसे सहसा भूख का अनुभव हुआ। उसने कल से खाना नहीं खाया

था। नृत्य थमने लगा और संगीत मौन हो गया। आज जब उसे मालूम हुआ कि उसे इस महीने का वेतन भी नहीं मिलेगा और पिछले वेतन का ज़िक्र ही ग़ायब है, तो वह झुँझला गया और प्रिंसिपल से उलझ पड़ा। प्रिंसिपल ने अपनी विवशता जताते हुए उसे जवाब दे दिया। उसे मालूम था कि प्रिंसिपल हज़ारों रुपये कमाता है और ऐश करता है। लेकिन जब भी प्रोफेसरों को वेतन देने का समय आता है, इस प्रकार बहाने बनाता है, जैसे चक्की में पिस रहा है। आज जब उसने प्रिंसिपल से वेतन मांगा और प्रिंसिपल ने फिर एक बहाना खड़ा कर दिया, तो उसने आवेश में आकर कह दिया—हमारा पेट काटकर यह जो हज़ारों रुपया कमाते हो, आखिर कहां जाता है?

प्रिंसिपल ने कहा "—प्रोफेसर साहब, मेरे हाथ बँधे हुए हैं, वर्ना आप जैसे कलाकार के लिए इनसान तारे भी तोड़ लाये!"

लेकिन प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप को भूख बुरी तरह सता रही थी और वह जानता था कि प्रिंसिपल चिकनी-चुपड़ी बातें करके चार सौ बीस कर रहा है। उसकी समझ में कुछ नहीं आया और वह रमानाथ की तलाश में निकल खड़ा हुआ।

प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने साइकिल-स्टैंड वाले से एक बीड़ी मांगी और सुलगायी। तभी दूर से रमानाथ साइकिल स्टैंड की ओर आता दिखायी दिया। जब वह अपनी साइकिल लेकर जाने लगा, तो प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने उसे कन्धे से पकड़ लिया। रमानाथ एक क्षण के लिए काँपा और फिर सचेत हो गया।

"—रमानाथ!"—प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने जाने-पहचाने स्वर में कहा।

"—हेलो ! प्रोफेसर युगल प्रदीप साब ! हम समझा, साला वह आ गया।"

"—आज दिन भर तुम्हारी खोज में घूमता रहा हूं।"

"—मेरी खोज ! अहे नसीब !"

"—रमानाथ ! मैं थोड़ी सी पीना चाहता हूं। बहुत दिन हो गये हैं। मेरे पास पैसे नहीं हैं।"—प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने अपनी जेब उलट दी।

"—पैसे... अभी बहुत बड़ा फूल उड़न्छू किया है।"

रमानाथ ने साईकिल फिर साइकिल स्टैंड पर रख दी और प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप के साथ चल पड़ा।

"—कहां ?"—रमानाथ ने पूछा।

"—गेलार्ड।"

"—गेलार्ड !...वह साला उसका एक बैरा मुझे जानता है। उससे बोल-चाल हो गयी है। फिर गेलार्ड साला रीगल के पास है।"—रमानाथ ने कहा।

"—पैलेस हाईट।"

"—हां, पैलेस हाईट ठीक रहेगा। आज वहां गाना बजाना भी होगा। तुम्हें म्युजिक पसन्द है ना। सितार... तुम्हें सितार पसन्द है, कभी सुनाओ। साली फिल्मी धुनें सुनते सुनते दिमाग़ खराब हो गया है।"—रमानाथ आदतन बोले जा रहा था और प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप का मौन अस्वाभाविक रूप से घना होता गया।

"—प्रोफेसर साहब, तुम कुछ खोया खोया नज़र आता है। क्या कोई नया इश्क चालू हो गया है।"

प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप अपनी अंगुलियों में पड़ी मिज़राब को एकटक देख रहा था।

"—सुना है, प्रोफेसर साब, तुम्हारी अंगुलिओं में जादू है। छोकरी लोग सुनता है तो ग़श खा जाता है।"

"—जादू तो तुम्हारी अंगुलियों में है, रमानाथ।"—प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप मुस्कराया।

"—वह तो भगवान् की कृपा है, प्रोफेसर साब। वर्ना साला रमानाथ तो निरा बुद्धू है, बुद्धू!"—रमानाथ तनिक लजाया।

देलेस व्हाईट निकट आ गया। दोनों लिफ्ट से ऊपर पहुँचे और कोने में पड़ी हुई मेज़ पर बैठ गये।

"—कुछ खाओगे?" —रमानाथ ने पूछा।

"—नहीं। केवल पीऊंगा।"

"—कुछ तो खाओ।"

"—मैंने कल से खाना नहीं खाया, लेकिन आज केवल पीऊंगा।"—प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप की आंखों में एक विचित्र सी लहर दौड़ गई।

"—खाली पेट शराब कटारी के माफ़िक काटती है। बड़ी ज़ालिम चीज़ है, प्रोफेसर साब। मुंह से लग जाये साली......" —रमानाथ ने मुर्ग़ रोस्ट का आर्डर दे दिया।

"—रमानाथ!"—प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने गिलास हाथ है लेते हुए कहा।

रमानाथ संभल कर बैठ गया। वह जानता था कि जब प्रोफेसर

योगेन्द्र प्रदीप उसके पास शराब पीने बैठता है, तो वह बहुत ही गम्भीर हो जाता है और न जाने कैसी-कैसी बातें करता है। लेकिन रमानाथ का विचार था कि प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप बहुत बड़ी २ बातें कहता है, जो उसके भेजे में नहीं समा सकतीं। जो बात उसकी समझ में ज़रा कम आती थी, वह उसे बहुत बड़ी बात समझता था। रमानाथ प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप को बहुत बड़ा आदमी समझता था। उसके विचार में दुनिया उसका मूल्य नहीं आंक सकी।

"—रमानाथ! "—प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने दूसरी बार कहा।

रमानाथ ने गिलास हाथ से रख दिया। उसे मालूम था कि प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप अब उसे तीसरी बार सम्बोधित करेगा और चुप हो जायेगा। जब वह पूछेगा, प्रोफेसर साब, क्या बात है, तो वह कुछ नहीं, ऐसे ही, कहकर खामोश हो जायेगा। रमानाथ भी कुर्सी से पीठ लगा कर बैठ जायेगा। प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप एक घूंट पीने के बाद कहेगा — रमानाथ, यदि तेरी यही अंगुलियां सितार के तारों को छू लें, तो संसार मदहोश होकर झूम उठे।

रमानाथ हंस कर कहेगा—प्रोफेसर साब, अंगुलियां तो बदल लूं, लेकिन हाथ की लकीरों का क्या करूं?

—सब कुछ हो सकता है, रमानाथ, हाथ की लकीरें भी बदल जायेंगी। —और प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप गिलास खाली कर देगा और रमानाथ उसे थामकर कर घर पहुँचा आयेगा।

—'रमानाथ!'—प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने तीसरी बार कहा।

"—क्या बात है, प्रोफेसर साब?"

"—कुछ नहीं, ऐसे ही ।" — प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप मौन हो गया।

वह थोड़ी देर बाद बोला "—मेरी अंगुलियां सितार बजाते बजाते थक गई हैं। मुझे भी अपना करतब सिखा दो।"

"—प्रोफेसर साब !" —रमानाथ ने एकदम गिलास मेज़ पर रख दिया।

"—तुम चौंक उठे, रमानाथ ? मैंने कल से खाना नहीं खाया। मुझे तीन महीने से तनखाह नहीं मिली। मैंने साइकिल-स्टैंड वाले से बीड़ी मांग कर पी है। मेरी छोटी बहन न्यूमोनिया से बीमार है और आज एक पाकेट मार से शराब पी रहा हूं!"—और प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने अंगुलियों में पड़ी हुई मिज़राब को दांतों तले दबाकर टेढ़ा कर दिया और शराब का अन्तिम घूंट पीने लगा ।

"—रमानाथ." मैं जानता हूं, तुम्हें दुःख हुआ है।

रमानाथ खामोश हो गया था।

"—जानते हो, तुम मुझे कब मिले थे ?" प्रोफेसर योगेन्द्र दीप ने पूछा ।

"—हां, हां, इसी साइकल-स्टैंड पर, जब उस तम्बूले साले ने तुम्हारी जेब काटी थी।"

"—हां।"

"—मैंने उस साले को खूब पीटा। साले को आदमी की भी पहचान नहीं। प्रोफेसर साब, बारह बरस हो गये हैं इस काम में। हराम की खाऊं, जो किसी भलेआदमी का फूल उड़ंछू किया हो। आज भी .."—रामनाथ ज़रा निकट हो गया"—मारवाड़ी सेठ था, साले ने

दस तहों के अन्दर सदरी में दस-दस के दस नोट उड़स रखे थे। वह मोटी सेठानी थी साथ में। रमानाथ का ही करतब है, प्रोफेसर साब। उस भलेमानस की क्या जेब काटूं, जिसकी पहले ही कटी हुई हो। प्रोफेसर साब, तुम्हारी कसम, तुम्हारे साथ रह कर बहुत कुछ सीखा है। अपना धन्धा है, ढंग से करो। गरीब की बददुआ क्यों लो?"—रमानाथ बोले जा रहा था।

"—तुम पहली बार मिले थे, तो मेरे पास सनफ्रक का सूट था। वह सूट मैंने दो महीने हुए बेच दिया। अब केवल यह धोती और कुर्ता रह गया है। इस मास अपना सितार भी बेच दिया है और अब मेरी छोटी बहन सख्त बिमार है। उसके घुंघरू भी मैंने बेच दिये हैं।" —प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने कहा।

रमानाथ का हाथ एकदम अपनी जेब में चला गया। उसने दस-दस के दो नोट निकाले और प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप के हाथ पर रख दिये।

"—प्रोफेसर साब, ना मत कीजिएगा, नहीं तो रमानाथ अपनी अंगुली काट खाएगा।"

"—नहीं रमानाथ। मैंने तुमसे दान या कर्ज़ लेने के लिए अपनी कहानी नहीं सुनाई। मैं अपना अधिकार मांगता हूं। संगीत महाविद्यालय के प्रिंसिपल ने तीन महीने से मेरा वेतन नहीं दिया वह बनिया है। प्रोफेसरों के पैसे मार लेता है। इस तरह उसने हवेली खड़ी कर ली है। मैं उससे केवल अपनी तनखाह के पैसे चाहता हूं, इससे अधिक कुछ नहीं। मुकदमा लड़ने के लिए मेरे पास रक़म नहीं।"

रमानाथ सब-कुछ समझ गया था। वह कभी भी प्रोफेसर

योगेन्द्र प्रदीप से बहस नहीं करता था। वह जानता था कि संगीत महाविद्यालय का प्रिंसिपल बड़ी अच्छी वायलिन बजाता है। दूर-दूर तक उसकी धूम है। वह बड़ा अच्छा आदमी है। उसकी समझ में न आया कि वह कैसे प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप के पैसे मार सकता है।

रमानाथ प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप को दूसरे दिन मिलने का वायदा करके चला गया।

दूसरी शाम को रमानाथ प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप के पास आया। वह झुंझलाया हुआ था।

"—वाह, प्रोफेसर साब ! किस साले का फूल उड़ंछू करने के लिये भेज दिया। हमने कभी भी ऐसे आदमी की जेब नहीं काटी जिसकी पहले ही कटी हुई हो। तुम्हारी कसम, प्रोफेसर साब, बारह साल हो गये हैं इस धन्धे में ! हराम हो......" रमानाथ ने काग़ज़ का एक पुरजा प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप के सामने फेंक दिया "—साले ने हज़ारों का हिसाब लिख रखा है और जेब में एक फूटी कौड़ी भी नहीं।"

योगेन्द्र प्रदीप ने वह काग़ज़ उठा लिया, जो किसी सेठ बनवारी लाल के नाम था। उसपर प्रिंसिपल ने हिसाब लिखा था—

आय

फीस बाबत मास अप्रैल	२०२५)

व्यय

किराया मकान सेठ रुकमनदास	३००)
किराया साज़	२२५)
नियमित खर्च मैनेजिंग डायरेक्टर व सेठ बनवारी लाल	१०००)
वेतन प्रोफेसरान	५००)

फुटकर　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　२००)

कुल　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　२२२५)

हानि २०० रुपये, जो अपनी ज़मानत से पूरी कर दी गई। अपनी तनखाह और प्रोफ़ेसर योगेन्द्र प्रदीप की तनखाह पिछले दो महीनों की तरह इस महीने भी अदा नहीं हुई। आपकी आज्ञा के अनुसार, उन्हें जवाब दे दिया गया है और साथ ही अपना त्यागपत्र भी सेवा में भेज रहा हूं। कान्ट्रेक्ट तोड़ने के कारण मेरी ज़ब्त ज़मानत से प्रोफ़ेसर योगेन्द्र प्रदीप को रकम अदा कर दी जाये। उनकी छोटी बहन सख्त बीमार है।

नीचे प्रिंसिपल के दस्तखत थे।

प्रोफ़ेसर योगेन्द्र प्रदीप कुर्सी पर गिर पड़ा।

बाहर 'ईवनिंग न्यूज़' वाला चिल्ला रहा था—उस्ताद मनोहर घोष, प्रिंसिपल, संगीत महाविद्यालय, ने आत्महत्या कर ली। उन की एक जेब कटी हुई पाई गई। कहा जाता है कि किसी पाकट मार ने उनकी जेब से भारी रकम उड़ा ली है।......

रमानाथ लपककर बाहर से समाचार-पत्र लेने चला गया और प्रोफेसर योगेन्द्र प्रदीप ने अपने खाली हाथ अपनी खाली जेबों में ठूंस दिये।

———

बाज़ाब्ता कार्रवाई

'सायकिल को ताला लगा कर रखें तो सायकिल-चोर का खतरा, और न लगायें तो पुलिस के सिपाहियों का—यानी तुम शादी करो तो भी पछताओगे और न करो तो भी पछताओगे।' पंतकी सायकिल को ताला लगा हुआ था जब वह चोरी हुई और अब चार वर्ष होने को आये हैं लेकिन अभी तक उसका पता नहीं चला। पंत की यह बात सुनकर मुझे पिछले वर्ष की एक घटना याद आ गयी। मैं और भाटिया ग्रैंड होटल से चाय पीकर नीचे उतरे तो सायिकल स्टैंड से भाटिया की सायकिल गायब थी।

'मेरी सायकिल कहां गयी ?' भाटिया ने ज़ाहिर में तो यह प्रश्न मुझ से किया था लेकिन वास्तव में उसने अपने आप से पूछा था।

'शायद कोई बैरा ले गया हो। इस होटल के बैरे भी बड़े हराम-खोर हैं।' मैंने केवल उसे आश्वासन देने के लिए कह दिया। उसने एक बार फिर सब सायकिलों पर अपनी दृष्टि दौड़ाई। मेरी निगाह भी आपसे आप उधर उठ गयी।

'मेरी सायकिल भी गायब है' मैं सहसा चिल्ला उठा।

'शायद कोई बैरा ले गया हो। इस होटल के बैरे भी—' भाटिया ने तनिक संतोषजनक स्वर में कहा।

'क्या तुमने ताला लगा रखा था ?' मैंने पूछा।

'यदि ताला लगाया होता तो सायकिल खो क्यों जाती ?' उसने निराशा से कहा।

'यही तो मुसीबत है । आज ही चाबी घर भूल आया हूं और आज ही —' मैंने अपने आपको कोसने के अन्दाज़ में कहा ।

अब इसके अतिरिक्त हमारे पास कोई चारा न था कि पुलिस थाने में जाकर सायकिल चोरी होने की रिपोर्ट दर्ज करा दें और उनके मिलने की आशा पर दूसरी सायकिलें किराये पर लें । पुलिस थाने में हमने सब-इन्स्पैक्टर से सारी घटना ब्यान की ।

'आपकी सायकिलें कहां से खो गयीं ?' सब-इन्स्पैक्टर ने बिना अपने कागज़ों पर से दृष्टि उठाये पूछा ।

'ग्रैंड होटल के नीचे से'—

'ताला लगा हुआ था ?'

'नहीं ।'

'क्यों ?' सब-इन्स्पैक्टर ने पहली बार नज़र उठाकर देखा जैसे किसी अभियोगी से अपराध मनवा रहा हो ।

हम चुप रहे क्योंकि यदि हम कहते कि चाबी घर भूल आये हैं तो वह कहते कि आप स्वयं यहां कैसे आ गये । 'आप की ज़रा-सी ग़फ़लत के कारण हमें कितनी कठिनाई होती है । यदि आप की सायकिल वास्तव में कोई उठा ले जाता तो आप ही लोग हमें कोसते, बदनाम करते । ठीक काम नहीं करते ! सायकिल चोरों से मिले हुए हैं । पुलिस विभाग और शराफ़त ।'

'यानी हमारी सायकिलें चोरी नहीं हुईं ।' हमने इतमीनान की सांस ली । हमें मालूम हुआ कि बिना ताले की सायकिलें पुलिस लावारिस माल की ज़ब्ती के कानून के अंतर्गत अपने अधिकार में कर लेती है । जिससे लोगों को सायकिल ताला लगाकर रखने की आदत पड़ जाय और

सायकिल चोरी की घटनायें कम हो जायें। पिछले छः मास से पुलिस इस नीति को अपना रही है। और पिछले छः मास में एक सौ सायकिलें चोरी हुईं, जिन में से दस बरामद हुईं और एक गिरफ्तारी अमल में लायी गयी। शायद एक अखबार बेचने वाले को गिरफ्तार किया गया जिसने चोरी की सायकिल अनजाने में खरीद ली थी। एक सौ सायकिलों में ताला लगा हुआ था।

'आप हमें सायकिलें वापस कर दें, हम आपके अत्यन्त आभारी होंगे। भविष्य में कभी ऐसी ग़लती नहीं होगी।' हमने सब-इन्सपेक्टर से विनती की।

'मैं कुछ नहीं कर सकता। आप ग्यारह बजे आइये और रामभरोसे से मिल लीजियेगा। वही लावारिस सायकिलों के इन्चार्ज हैं।' सब-इन्सपेक्टर ने पहली बार हमारी ओर भरपूर दृष्टि से देखा और मुस्करा दिया। इस खाकी से कुरूप लिबास में उसकी मुस्कराहट बहुत मधुर लग रही थी। हम भी मुस्कराते हुए 'धन्यवाद' कहकर पुलिस थाने से बाहर आ गये।

ग्यारह बजने में अभी पांच मिनट बाकी थे। हम पुलिस थाने पहुँच गये। रामभरोसे नई बुनी हुई चारपाई पर पुरानी जीर्ण मैली सी फ़ाइलों पर सिर रक्खे लेटा था। उसके गंजे सिर पर सरसों का तेल चमक रहा था। नोकदार मूंछों के नीचे मोटे-मोटे भारी होंठों की सख्ती प्रकट करती थी कि उसने अपने जीवन भर में कोई सुन्दर शब्द या नम्र वाक्य नहीं बोला। उसकी धोती असाधारण रूप से फटी हुई थी और वह अपनी जांघ अपने बालों भरे हाथों से खुजला रहा था।

'आप यहां कैसे आए?' रामभरोसे ने निरन्तर खुजलाते हुए कहा।

'हमारी सायकिलें आप उठा लाये हैं।'

'हम उठा लाये हैं? क्या हम सायकिल चोर हैं?'' रामभरोसे चारपाई पर उठकर बैठ गया। उसके हाथ तेज़ी से हरकत करने लगे।

'हमारा मतलब है...' हमने कहा।

'मतलब की...! ताला लगा रखा था?' उसने एक विशेष गाली दी। हमने इन्कार में सिर हिला दिया।

'बस सिर हिला दिया। जैसे गवर्नर हैं और अगर सायकिलचोर सायकिलें ले जाता तो अखबारों में खबरें छप जातीं। पुलिस वालों को निकम्मा साबित किया जाता। साहब, एक सायकिल का पता लगाने में जो—पुलिस वाले ही जानते हैं'—इस बार गाली तनिक अधिक गन्दी थी।

इस बीच में हमने कमरे में पड़ी हुई सायकिलों का निरीक्षण कर लिया था। 'वह देखिये हमारी सायकिलें दोनों साथ २ पड़ी हैं।' हमने अपनी सायकिलें पहचान लीं।

'मुझे भी नज़र आ रही हैं। लेकिन सबूत क्या है?' उसने हाथ से संकेत करके पूछा।

'क्या वे सायकिलें नहीं?' भाटिया ने कहा।

'आपको मज़ाक सूझ रहा है। जब छः बार थाने के और दस बार अदालत के चक्कर लगाने पड़ते हैं तो बड़ों २ की...!' अबके गाली वाजबी सी थी।

'मैंने पूछा है आपके पास मिलकियतका सबूत है?'

मेरे पास तो सबूत था। लेकिन भाटिया के पास इसके अतिरिक्त

कोई सबूत न था कि वह सायकिल उसकी है। लोग छः वर्षों से उसे इसी सायकिल पर सवार देख रहे हैं।

'किसीकी लड़की भगा कर तीन वर्ष तक घर में डाल रखो और खूब...और कह दो जी, यह मेरी बीवी है।'

रामभरोसे ने फिर पूछा। 'क्या सबूत है ?' रामभरोसे ने मेरे सबूत को नाकाफ़ी घोषित करते हुए कहा।

'क्या नम्बर है आपकी सायकिल का ?'

'ए ४६०८ !'

'मेक ?'

'हम्बर'

'क्या हम्बर, पहिली बार सुना है। फ़िलिप, रैले, बी० एस० ए०, हिन्द। लेकिन क्या बताया हम्बर ! क्या नाम है ? कब ख़रीदी थी ?'

'१९४९ में'

'पहली लड़ाई में तो नहीं ख़रीदी थी ?' रामभरोसे ने सायकिल की जीर्ण-शीर्ण अवस्था को देख कर कहा।

'जब से मैंने यह सायकिल ख़रीदी है कभी इसे अपने कर कमल से साफ़ नहीं किया। इसलिए ज़रा पहली लड़ाई की दिखाई देती है।' मैं बोर हो रहा था। लग भग इस प्रकार के प्रश्न भाटिया से भी किये गये।

'अब तो आप की तसल्ली हो गयी। सायकिलें दे दें तो बड़ी कृपा होगी हुज़ूर की।'

हमने रामभरोसे को तनिक मूडमें देखते हुए कहा।

'यह कैसे हो सकता है। एक साहिब के पास सबूत सिरे से है ही नहीं और आप के पास सबूत नाकाफ़ी है।'

'हम ज़मानत दिलवा सकते हैं!'

'बाज़ाब्ता कार्रवाई हो चुकी है। रोज़नामचे में दर्ज हो गई है। रिपोर्ट लिख ली गयी है। मैजिस्ट्रेट के हुक्म के बिना सायकिलें नहीं मिल सकतीं।' उसने हमारी ओर से उदासनी होकर काग़ज़ पलटते हुए कहा।

'यदि आप चाहें तो सब कुछ हो सकता है।' हमने रामभरोसे से मिन्नत की।

'आप पढ़े लिखे आदमी हैं। जानते हैं कि बाज़ाब्ता कार्रवाई के बिना कुछ भी नहीं हो सकता। आपको सायकिल देकर अपनी...? एक गफ़लत करते हैं और उसपर क़ानून तोड़ने के लिए कहते हैं?'

सामने दीवार पर लिखा था? 'नम्रता क्रोध को दूर करती है।' रामभरोसे अपनी जांघों को खुजला खुजला कर गालियों का कम्पाउन्ड मिक्सचर तैयार कर रहा था।

× × × ×

स्पष्ट है कि रामभरोसे के निर्णय के बाद मेजिस्ट्रेट साहब की अदालत में उपस्थित होना पड़ा। बड़ी मुश्किल से उनका कमरा मिला। उनकी अदालत साधारण अदालतों से भिन्न थी। न कोई वकील और न कोई गवाह। एक मुन्शी और एक कोषाध्यक्ष थे। अभियोगी उपस्थित हुआ। मुन्शी ने नाम, काम, और अपराध बताया। मैजिस्ट्रेट साहब ने फ़ैसला दे दिया—तीन रुपये? और तांगे वाला या रिक्शा वाला

या इक्के वाला, या पान बीड़ी सिग्रेट वाला या इस प्रकार कोई वाला भयभीत होकर खामोश हो जाता और इच्छा करता कि कोई वकील होता, कुछ जिरह होती। हमने सोचा हमें भी शायद जुर्माना अदा करना पड़ेगा और तब सायकिलें मिलेंगी। हम अभियोगियों की क्यू से बेपरवाही प्रगट करते हुए मजिस्ट्रेट के सामने आ खड़े हुए।

'क्या है?' मजिस्ट्रेट साहब ने अपनी सफ़ेद २ भवों को सिकोड़ते हुए कहा।

हमने अर्ज़ी पेश कर दी।

'कहा है!'

'इस में सब कुछ लिखा है हुजूर!' भाटिया ने भी किसी तांगे वाले अभियोगी की तरह झुक कर कहा।

'इसे पढ़ने का अवकाश किस के पास है साहब?' उन्होंने अभियोगियों की लम्बी पंक्ति की ओर देखते हुए कहा।

'सायकिल...!'

मजिस्ट्रेट ने हमारा वाक्य पूरा भी न सुना और ऊपर से पढ़कर लिख दिया। हम बहुत प्रसन्न हुए कि इतनी जल्दी, बिना किसी कठि-नाई के, और बिना कोई सबूत पेश किये सायकिल वापिस लौटाने की आज्ञा मिल गयी।

'अरे यह तो मामला गड़बड़ हो गया,' भाटिया ने पढ़ते हुए कहा—'एस० ओ० नवाबगंज टु रिपोर्ट!'

भाटिया ने लपक कर मैजिस्ट्रेट साहब से पूछा, 'क्यों हमें एक बार फिर यहां आना पड़ेगा।'

'कई बार आना पड़ेगा,' वे झुंझला कर बोले और हम सटपटा

कर कमरे से बाहिर निकल आये। कमरे से आवाज़ आ रही थी—तीन रुपये, पांच रुपये, सात रुपये......

दूसरे दिन हम फिर रामभरोसे के कमरे में पहुँचे। सब-इन्स्पैक्टर ने अर्ज़ी देखते हुए कहा, 'रिपोर्ट लिख दो कि सबूत मिल गये।' सब-इन्स्पैक्टर ने हमें कुर्सियों पर बैठने के लिए पहली बार कहा।

रामभरोसे ने सब-इन्स्पैक्टर की ओर देखा और फिर हमारी ओर!

'एक सायकिल का नम्बर मशकूक है। रामभरोसे ने कहा। सब-इन्स्पैक्टर, रामभरोसे, भाटिया और मैं सायकिल के निकट आ गये। रामभरोसे ने रेगमार से नम्बर साफ़ करते हुए कहा 'यह दो अंक दूसरे अंकों से भिन्न हैं।'

'तो इस सायकिल को एक्सपर्ट के पास भेजा जायेगा।' सब-इन्स्पैक्टर ने कहा।

'कब खरीदा था?' रामभरोसे ने पुनः प्रश्न किया।

'१९४७ में'

'लूटमार में तो नहीं मिल गई?' रामभरोसे ने तफ़्तीश की गम्भीरता जारी रखी।

'ऐसा ही समझ लीजिए।' भाटिया अब उदासीनता की सीमा तक पहुंच चुका था। इसके बाद बस यही कहना शेष था कि महोदय यह सायकिल मैंने पिछले वर्ष उड़ायी थी और अपने अपराध को मानता हूं।

'मेरी सायकिल का सबूत तो आपको मिल गया।' मैंने कहा।

'आप की सायकिल के बारे में तफ़्तीश जारी है।' रामभरोसे

ने कहा।

'इसी नम्बर की सायकिल दो साल हुए, कलक्टरगंज से चोरी हो गयी थी।' रामभरोसे ने लाल किताब से वही नम्बर निकाला।

'लेकिन इसमें तो 'ए' नहीं है।' मैंने कहा।

'शायद गलत छप गया हो! कलक्टरगंजके थानेसे मिसल की जांच के बाद रिपोर्ट लिखी जायगी।'—रामभरोसे ने निर्णयात्मक स्वर में कहा।

हम दोनों ने प्रार्थना भरे स्वर में कहा, 'सायकिल बिना ज़िन्दगी का सफ़र कैसे कटेगा। इन दो दिनों में ही चार रुपये बसों और तांगों का किराया पड़ गया है। हम ज़मानत देने के लिए तैयार हैं।'

'परसों तशरीफ़ लाइए। तफ़शीश के बाद रिपोर्ट भेजी जायगी।' सब-इन्स्पैक्टर ने हम से आंख मिलाते ही झुका ली। उन्हें शायद विभाग में आये दो-एक वर्ष ही हुआ था।

एक दिन बाद मैं अकेला ही पुलिस थाने पहुँचा। रामभरोसे ने मेरे भीतर घुसते ही कहा।

'अब आप अपनी ज़मानत का बन्दोबस्त करवाइये। सायकिल तो चोरी की साबित हो गई। नम्बर मिल गया।'

मैं चकित रह गया। पूरे एक वर्ष रकम जमा करके और जीवन की आवश्यकताओं से वंचित रह कर नयी सायकिल खरीदी थी और वह भी चोरी की साबित हो गयी।

'तो फिर क्या कार्रवाई होगी।' मैंने पूछा।

'बाज़ाब्ता कार्रवाई होगी।' रामभरोसे ने जांघों को खुजलाते हुए

कहा।

'यानी!'

रामभरोसे मौन रहा।

मैंने फिर पूछा—'जाब्ता कार्रवाई कैसे होगी?' रामभरोसे फ़ाइलों में उलझा रहा और मौन रहा। मैंने समझा शायद...! लेकिन सामने मोटे शब्दों में हिन्दी और उर्दू में लिखा था 'रिश्वत लेने वाला और देने वाला दोनों मुजरिम हैं। रिश्वित लेना और देना महा पाप है!'

थोड़ी देर तक हम दोनों मौन रहे।

'कल सुबह पधारिए। हम आंख मूंद कर सायकिल दे देंगे।' रामभरोसे के स्वर में कुछ निराशा और कुछ मिठास घुल गई।

मैं पुलिस थाने से बाहर आ गया और सोचने लगा कि सायकिल लेने गया, तो स्वयं भी रह न जाऊं। शामको भाटिया ने बताया कि रामभरोसे ने बिना सबूत देखे उसकी रिपोर्ट तो लिख दी और तुम्हारी अर्ज़ी खो गयी है।

पुलिस स्टेशन से अर्ज़ी खो गयी, यह सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ।

'आज एक सायकिल भी वहीं से चोरी हो गयी।'

'कैसे—आऐ' मैं चौंका। 'लेकिन प्रसन्नता तो अर्ज़ी के खो जाने की है मित्र!' यदि अर्ज़ी होती और जैसे मेरी सायकिल चोरी की साबित हो गयी है तो अपनी सायकिल से तो हाथ धोने ही पड़ते और साथ में अपनी इज्ज़त और आज़ादी से भी! 'अब तो केवल सायकिल ही गयी है। यही समझेंगे कि कोई सायकिल चोर उठा ले गया है। ताला

न लगाने का दण्ड मिल गया है।'

'यदि वह अब भी चोरी की साबित हो जाय तो? भाटिया ने कहा।

'हो गयी है! लेकिन क्या सबूत है कि वह मुझ से ही बरामद हुई है और क्या सबूत है कि मैंने ही 'क्लेम' किया है?

'है क्यों नहीं?'

'कहां है? ज़ाब्ता कार्रवाई कहां हुई है?'

हम दोनों खिलखिला कर हंस पड़े। रामभरोसे ने भाटिया से कह दिया था कि अर्ज़ी नयी लिख दो। न भी लिखो, मैं रिपोर्ट लिखे देता हूं, स्वयं ही हस्ताक्षर भी करवा लूंगा।

हमने सोचा यह ज़ाब्ता कार्रवाई का मामला है। स्वयं ही करें तो बेहतर रहेगा। अब हमें रोज़मर्रा धूप और परेशानी और रामभरोसे से मुलाकातों में मज़ा आने लगा था। विशेष रूप से उसकी गालियों की नवनीता में। मेरी अर्ज़ी पर भी रामभरोसे ने लिख दिया कि सबूत मिल गया।

हम दोनों एक बार फिर मैजिस्ट्रेट के सामने जा खड़े हुए। कमरे में प्रवेश करते ही वही आवाज़ आई। 'तीन रुपये...पांच रुपये...सात रुपये...।'

और कोषाध्यक्ष की संदूकची में मैले नोट और पुराने रुपये जमा हो रहे थे। एक लम्बी पंक्ति थी जिसमें तांगे वाले, रिक्शा वाले, पान बीड़ी सिग्रेट वाले, खोंचा वाले, झिल्ली वाले, चाय और चाट वाले विनीत मुद्रा में खड़े थे। हम पहले की तरह बेपरवाही से सब से

आगे पहुँच गये लेकिन मालूम हुआ कि मैजिस्ट्रेट साहब ज़रा बाहर तशरीफ़ ले गये हैं। आधा घंटा प्रतीक्षा करनी पड़ी तब जाकर कहीं वे आये। उन्होंने हमारी अर्ज़ी पर उचटती हुई दृष्टि दौड़ाते हुए लिख दिया।

'बाद सबूत सायकिल बहवाला मालिक।'

शायद उनकी टूटी फूटी उर्दू का यही अर्थ था। क्योंकि उसके बाद हमें सायकिल ले जाने का परवाना मिल गया। शाम को हम पुलिस थाने आये मगर रामभरोसे अपने गांव चले गये थे। दो दिन के बाद उन से भेंट हुई। रामभरोसे अभी हमारी अर्ज़ी की जांच कर रहा था कि एक साहब लम्बी-चौड़ी टाइप की हुई अर्ज़ी लेकर आये। जिसमें उन की खोई हुई सायकिल का वंश वृक्ष और केसहिस्ट्री लिखी हुई थी और उसके साथ बहुत सी रसीदोंका पुलिन्दा था।

'कहां से चोरी हुई है?' रामभरोसे ने उसी अन्दाज़ में पूछा।

'हज़रत गंज से।'

'नम्बर?'

'डी ६२६२'

'कब खरीद की थी?'

'सन १९४९ में'

'कहां से?'

'सायकिलों की दुकान से'

'रसीद खरीद की?'

सब सूचना अर्ज़ी में दर्ज थी। एक बार उन महोदयने रामभरोसे

का ध्यान इस ओर आकर्षित भी किया मगर रामभरोसे एकदम तेज़ हो गये।

'आप पुलिस थाने आये हैं साहब, अपनी ससुराल नहीं। यहां सब काम बाज़ाब्ता कार्रवाई से होता है।'

वह महोदय खामोश हो गये। रसीद खरीद के बाद रामभरोसे ने पूछा।

'कोई और सबूत ?'

उन्होंने बहुत से पत्रों का ढेर लगा दिया। गो कि रसीद खरीद के बाद वे सब सबूत गैर ज़रूरी थे लेकिन रामभरोसे को पूरी बज़ाब्ता कार्रवाई करनी थी।

'ताला लगाया था ?' रामभरोसे ने फिर प्रश्न शुरू किये।

'नहीं'

'क्यों ?'

'एक मिनट के लिए भीतर गया था लेकिन...।'

'आप एक मिनट के लिये भीतर गये थे लेकिन यहां तो हमारे हज़ार मिनट बेकार कर दिये। यह पुलिस का विभाग......'

अब के रामभरोसे की गाली किसी से भी कोई सम्बन्ध कायम न कर सकी।

'आपको किस पर सन्देह है ?'

'अपने चपरासी पर...'

'क्यों ? उस पर क्यों सन्देह है ?'

'एक बार वह मेरी पतलून बेच आया था।'

'उसके अलावा...?' वह महाशय सोच में पड़ गये। 'मेरा फाउंटेन पेन उड़ा ले गया था...।'

'आप अपने चपरासी को ले आइये।'

वह महोदय एक मिनट के लिए रुके और पन्द्रह मिनट में अपने चपरासी समेत वापस आ गये।

इस बीच में रामभरोसे ने हमसे रजिस्टर पर दस्तखत लिये, हमारी वलदियत और सकूनत के साथ। मालखाने से जब सायकिलें बाहर आईं तो ऐसा मालूम हुआ कि घायल बन्दियों का तबादला हो रहा है। धूल से अटी हुई टेढ़ी-मेढ़ी हमारी घायल सायकिलें!

हमने रामभरोसे का धन्यवाद किया कि उसने मेरी सायकिल चोरी की साबित होने से बचा ली और भाटिया की सायकिल का नम्बर सन्देहजनक होने पर और सबूत के बिना होने पर भी हमें सायकिलें ऐक डेढ़ सप्ताह पश्चात दे दीं। हमें मालूम नहीं कि बाज़ाब्ता कार्रवाई कब हुई। लेकिन रामभरोसे ने उन महोदय का सायकिल भी मुक्त करने की आज्ञा दे दी।

'यानी सायकिल...यानी कि पुलिस...' वह महोदय आश्चर्य-जनक स्थिति में खड़े रह गये और रामभरोसे ने चपरासी को शेष तफ़तीश के लिए बैठ जाने की आज्ञा दी।

'अब इसके बैठने की क्या आवश्यकता है?' वह महोदय कुछ लज्जित हुए। शायद उन्होंने भी झूठ बोला था।

'नहीं साहब जब तक बाज़ाब्ता कार्रवाई न हो, यह कैसे जा सकता है!' रामभरोसे ने सख्ती से कहा।

किसी भेद का पता लगाने के लिए रामभरोसे अपने सामने फैले हुऐ पीले-पीले से पत्रों पर कुछ लिखने लगा।

हम सब थाने से बाहिर निकल कर लम्बी २ सांस लेने लगे। और सायकिलों में पम्प से हवा भरने लगे। सायकिलों पर सवार हो कर हम तेज़ी से थाने से दूर हो गये इस डर से कि कहीं रामभरोसे की बाज़ाब्ता कार्रवाई अपूर्ण न रह गयी हो।

रोने की आवाज़

यह मेरी कल्पना थी या स्वप्न या केवल भ्रम...या हक़ीक़त। लेकिन मुझे ऐसा आभास हुआ कि किसी की पदचाप दरवाज़े के निकट आकर रुक गई है। दरवाज़े पर हल्की सी दस्तक हुई। दरवाज़ा बिना आवाज़ पैदा किए खुला और कोई अन्दर आ गया और मेरे निकट एक क्षण के लिए बैठ गया। मैंने अपने सारे अङ्गों को शिथिल पाया। जैसे किसी ने बर्फ़ीली लहर से मेरी समूची शक्ति छीन ली हो। मैं निस्तब्ध लेटा रहा और फिर पूरे ज़ोर से सारी शक्ति समेट कर आंख खोली। लेकिन मेरे निकट कोई न था। जो कोई आया था जा चुका था। शायद रामाधीन ही आया हो। लेकिन मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मेरे आसपास आंसुओं की जमी हुई बून्दें हैं। या यह बात होगी कि कुछ दिनों से जब भी मैं अपने कमरे में जाता हूं खामोशी से लेट जाता हूं और छत की कड़ियां गिनता हूं तो उनके टूटने की आवाज़ आती है जैसे मरते हुए कोई आदमी कराहता है। छत नीचे की ओर खिसकती दीखती है। दीवारें निकट सरकने लगती हैं, जैसे किसी कब्र में कोई लाश दफ़न हो रही हो। उस दिन के बाद मैंने कई बार ऐसी स्थिति महसूस की। मेरे कमरे में न भूत था, न प्रेत, न परछाईं और न कोई अजनबी... सिवाय मेरे और मेरे बूढ़े नौकर रामाधीन के। मैंने इस विचार को दिल से निकालने के लिए यही सोच लिया कि इसका कारण मेरे एकाकीपन का दर्द है। या वह बोझल बर्फ़ीला वातावरण है जो रामाधीन के पीड़ित मन से इस कमरे पर घुटन सा छाया रहता

था। रामाधीन कमरे में बहुत कम जाता था। जब भी उसने कमरा साफ़ करना होता या मुझे खाना देना होता या किसी मित्र के आने की सूचना पहुंचानी होती या डाकिये से कोई चिट्ठी पत्र लाया होता या कभी २ वैसे ही एक क्षण के लिए आ जाता। मेरी ओर देखता, उसके होंट हिलते और वह बिना कुछ कहे चला जाता। रामाधीन का इस प्रकार अचानक आ जाना, मेरी ओर देखना और कहने के लिए होंट हिलाना और फिर बिना कुछ कहे चले जाना मुझे बेचैन सा बना देता था। वातावरण और बोझल तथा बर्फ़ीला हो जाता। कमरे के एकाकीपन और उसकी खामोशी का दर्द गहरा हो जाता।

उस दिन की बात है कि मैं थका हुआ था और अभी बहुत काम बाकी था। मैंने चाय पीने की आवश्यकता महसूस की। परन्तु इतना साहस न था कि उठकर स्वयं बना लेता, और न ही रामाधीन को कह सकता था। एक बार मैंने उस से चाय बनाने के लिए कहा था तो वह बाहर चला गया था और फिर किसी काम में लग गया था। मैंने तनिक क्रोध से पूछा—"रामाधीन क्या बहरे हो गये हो। सुना नहीं चाय बनाने के लिए कह रहा हूं।" यह उन दिनों की बात है जब मैं नया नया इस कमरे में आया था। यहां मेरी मुलाक़ात रामाधीन से हुई थी और मैंने उसे नौकर रख लिया था। उसने मेरी ओर देखा और खामोश रहा और फिर बाहर जाने लगा। उसकी यह खामोशी जाने क्यों मेरी छाती पर बर्फ़ की सिल की तरह आकर जम जाती है और मुझे उसके बर्फ़ीले बोझ तले सांस रुकता सा, शरीर टूटता और शिथिल सा महसूस होता है। रामाधीन से बात करने की मेरी तमाम कोशिशें बेकार थीं। 'जी हां', 'जी नहीं' के अतिरिक्त उसके मुंह से शायद ही कोई दूसरा शब्द निकला हो! अधिकतर वह अपना काम आंखों से ही

लेता था। उसकी दृष्टि सब बता देती थी कि वह क्या कह रहा है। रामाधीन की दृष्टि से बात समझने की मेरी योग्यता इतनी बढ़ गई थी कि कभी २ स्वयं भी आश्चर्य करता हूं कि उसने मेरी ओर देखा और मैं समझ गया कि वह क्या कहना चाहता है। इसलिए भी उसकी खामोशी अधिक गहरी हो गई थी। फिर रामाधीन पर क्रोध करने का कोई कारण भी न था।

उसी दिन जब मैंने अपने कमरे में किसी के रोने की आवाज़ सुनी। मैंने रामाधीन को चाय बनाने के लिए कहा। रामाधीन इस बार बाहर नहीं गया और न ही किसी दूसरे काम में लग गया। बल्कि मेरे निकट आकर खड़ा हो गया और मेरी ओर देखने लगा। फिर दृष्टि झुका ली। 'रामाधीन क्या बात है, खामोश क्यों हो गए?''—मैंने पूछा। यद्यपि वह पहले से ही खामोश था। लेकिन वह आंखों से बात करता था और दृष्टि झुकाने का अर्थ खामोश होना था।

अवश्य ही बात कुछ गम्भीर सी जान पड़ी। उसकी खामोशी किसी अपराध का परिचायक न थी और न ही किसी अपराध को छिपाने की चेष्टा की। फिर क्यों उसकी दृष्टि में भय और करुणा की भावना रहती है? आखिर उसका मुंह खुला, "मालिक मुझे ऐसा लगता है कि मैं जो चाय बनाऊंगा वह ज़हर हो जाएगी।"

'ज़हर?'— हां मैं कुछ समझ न सका। रामाधीन दर्शन की बात कर रहा था, कविता कह रहा था या वास्तव में हकीक़त का ब्यान कर रहा था। वह मेरी चारपाई के साथ लग कर बैठ गया।

'मालिक!—आप कहिएगा मेरा दिमाग़ चल गया है, बूढ़ा हो गया हूं......।' उसने मेरी ओर देखा और सामने पड़े हुए मेरे

बनाए हुए आदर्श स्त्री के चित्र को देखने लगा। मेरे मस्तिष्क में एक दम बिजली टूटी और चारपाई के निकट किसी के बैठने की याद लहरा गई।

'रामाधीन, क्या तुमने इस कमरे में रोने की आवाज़ सुनी है।' मेरे शरीर में बर्फ़ीली झरझरी हुई और दिल में भय की लहर दौड़ गयी।

'रोने की आवाज़, मालिक...' वह एक क्षण के लिए ख़ामोश हो गया। 'नहीं तो...... सुनी है, अब से कुछ वर्ष पहले......' वह फिर ख़ामोश हो गया। उसके चेहरे पर दुख की रेखा दौड़ गयी।

'क्या हुआ था—उन दिनों रामाधीन।'—आज रामाधीन की ख़ामोशी टूटेगी। बात छिड़ गयी थी।

'मालिक, इस से पहले जो मेरे मालिक थे उनके कमरे में भी रोने की आवाज़ आती थी। मैं अभी छोटा था उनके घर में नौकर हुआ था। मेरी आयु अब चालीस पैंतालीस की होगी। बस यही कोई नौ दस वर्ष का रहा हूंगा जब उनके यहां आया था। मालिक के पास परमात्मा का दिया सब कुछ था। अपना मकान था, गाड़ी थी, नौकर चाकर थे। काम धंधा खूब था और फिर जो ख़त्म होने को आया तो सब धीरे २ ख़त्म हो गया। मकान और गाड़ी तो अपने साथ न ला सके। बस अपनी और बीवी बच्चों की जान बचा कर ही निकल सके। सब नौकर चाकर गये। लेकिन मैं सब से पुराना था। बचपन से काम कर रहा था। मालिक ने मुझे अलग न किया। यद्यपि घर के सब गहने बिक गये थे, जो रुपया पैसा था बेकारी के दिनों में चुक गया। काम धंधा कई बार चलाने की कोशिश की लेकिन जब भाग्य ही बिगड़ जाए तो वह क्या करते। फिर भी अपनी हिम्मत थी

कि अपने लड़के को बी.ए. करा दिया और चैन की सांस ली। उनकी आशा थी कि अच्छे दिन देखने को मिलेंगे। पर मालिक कभी अच्छे दिन भी लौटे हैं? मालकिन रसोई घर में जाते डरती थी, सोचती क्या पकाए और क्या खिलाए। लड़के को काम न मिला। लड़की अब सयानी हो गई थी। मालकिन को यही ग़म खा गया और इसी ग़म में घुल घुल कर मर गयी। मालिक, उसका धैर्य देखने का था। लेकिन जब दिल को ही घुन लग जाए तो कोई कब तक जिएगा? लड़के ने काम की कोशिश की, लेकिन काम न मिला। घर में जैसे भूत प्रेत की परछाइं पड़ गई थी।'

'काम मिला'—मालिक पूछते।

'नहीं'—उत्तर मिलता।

मालिक अखबार पढ़ने लगते और अपने मन में सोचते कि वह पहले शब्दों से पूछते थे और अब आंख से पूछते हैं। यद्यपि वह समझते थे कि हर बार उसका उत्तर 'नहीं' होगा; लेकिन फिर भी कभी कभी पूछ लेते ताकि मोहन को ढाढ़स बंधी रहे। हर बार पूछने के बाद वह महसूस करते कि उन्होंने उसके दुख को बढ़ा दिया है। वह अपने मन में फैसला करते कि अब कभी न पूछेंगे और फिर पूछते। उनके मन को शान्ति न थी। उनके शरीर में अब शक्ति न थी कि कोई काम कर लेते। और मोहन को काम न मिलना था और न मिला। खाते पीते दर दर की ठोकरें खानी पड़ गईं। मुंह अंधेरे निकलता और रात गए आता। 'खाना खालो!'—मालिक पूछते। मन में सोचते, क्या खायेगा? बना ही क्या है?

'थोड़ा खालो!'

'बिल्कुल भूक नहीं, रास्ते में प्रकाश मिल गया था। ज़बरदस्ती घर ले गया वहीं खाना पड़ गया।'

कभी प्रकाश मिल जाता। कभी चन्द्र। कभी बचपन का कोई मित्र.........लेकिन मालिक खामोश हो लेते, सोचते, समझते और सो जाते।

'आपने खा लिया?'—वह पूछता।

'हां,' मालिक कहते और मुन्नी हांडी पर कड़छी रखे प्रतीक्षा करते करते सो जाती। सुबह उठकर सब जने रात का बचा खुचा खा लेते। सब की दृष्टि एक दूसरे पर पड़ती, बचती, हटती और अपने मन में डूब जाती। 'मेरा विचार है मुन्नी को नौकरी मिल सकती है।' मोहन ने एक दिन मालिक से कहा। 'मुन्नी नौकरी करेगी?' बाप के अभिमान ने पूछा, क्रोध में भी और आश्चर्य में भी। मोहन खामोश हो गया। सोचा अगर मुन्नी नौकरी नहीं करेगी तो क्या करेगी। अब इस घर में कौन संदेसा लेकर आएगा—उसने मन में सोचा।

'थोड़े दिन काम कर ले। जब उसे कोई काम मिल जायगा तो छोड़ देगी।'

'अब मुन्नी ने पढ़ना भी छोड़ दिया है! घर बैठने से.........' मोहन ने कहा।

मालिक समझते थे कि मुन्नी ने पढ़ना छोड़ दिया है या...... दूसरे कमरे से मुन्नी की आवाज़ आई।

'मैं कहीं काम कर लूं तो क्या हर्ज है! सब ही तो करते हैं। रायज़ादा की बीबी भी तो करती है। कितने बड़े अफ़सर की बीवी है।'

वह बड़े अफ़सर की बीवी है और मुन्नी......मालिक को ठेस पहुंची।

'जब मोहन को काम मिल जायगा तो छोड़ दूंगी।' मुन्नी ने कहा। यह क्या रहस्य है कि मोहन के मन की बात मुन्नी के होंटों तक जा पहुँची। मालिक ख़ामोश रहे। मुन्नी नौकरी करेगी? बाप के अभिमान ने प्रश्न किया। मुन्नी को नौकरी करनी पड़ेगी। ख़ाली घर के ख़ाली बर्तनों से आवाज़ आई। बाप ख़ामोश रहा। मुन्नी को नौकरी मिल गई, किसी प्राइवेट स्कूल में। कुछ दिनों बाद मोहन को भी काम मिल गया। साठ रुपये महीने का। किसी केमिस्ट की दुकान पर। सुबह आठ बजे से रात के नौ बजे तक। वह घर आता तो उसके कपड़ों से दवाइयों की गंध आती। उसे खांसी की शिकायत हो गई। फिर वह लगातार खांसने लगा। फिर हल्का हल्का बुख़ार होने लगा।

'मोहन तुम दवा क्यों नहीं लेते?'—मालिक पूछते।

'ले रहा हूँ, वैसे कोई ख़ास तकलीफ़ नहीं। खांसी की शिकायत है। मौसम ही ऐसा है। दूर होजायगी।'

फिर वह ख़ून थूकने लगा और मालिक की दृष्टि से छिपने लगा। मुन्नी से दूर रहने लगा।

एक दिन मुन्नी फ़र्श पर ख़ून देखकर चौंकी।

'मेरा ख़्याल है मोहन को अब काम पर नहीं जाना चाहिए।'' मुन्नी ने मालिक से कहा।

'क्यों?'

मुन्नी चौंकी। मालिक पूछ रहे हैं क्यों। इसलिए कि पैसे आना

बन्द हो जायेंगे। 'उसकी तबियत तनिक खराब रहती है।'

'लेकिन—' मालिक के मन में खाली बर्तन बजने लगे।

'मैं तनिक अधिक काम कर लूंगी।' मुन्नी ने कहा।

लेकिन स्वयं ही मोहन का दुकान पर जाना बन्द हो गया। उसे नौकरी से जवाब मिल गया था। और अब मुन्नी के वेतन से दवा के पैसे भी निकलने लगे। घर में भूत-प्रेत की परछाइं फिर से दीखने लगी। अचानक एक रात मोहन गायब हो गया। बाप ने गली कूचे छान मारे। मुन्नी रोई चिलाई। 'मैं और मेहनत कर लेती। तुम्हारा इलाज हो जाता। तुमने समझा हमें कुछ होगया तो—और फिर बेकार रोगी घर में......तुम अच्छे हो जाते। हमने तुम्हें खो दिया। हम ने देखा तुम खांसे, बीमार हुए, खून थूका।'—मुन्नी रोने के अतिरिक्त क्या कर सकती थी?

फिर मुन्नी देर से आने लगी। अधिक पैसे लाने लगी। मालिक जैसे दुनियां से सन्यास ले चुके थे। मुन्नी छिप छिप कर कभी रो लेती।

'क्या तुम्हें अधिक काम मिल गया है?' मालिक ने पूछा।

'हां शाम की शिफ्ट में भी!'

'बड़ी देर हो जाती है।'

'हां'।

'मैं तुम्हें लेने आजाया करूं।'

'नहीं कोई आवश्यकता नहीं।'

एक दिन मुन्नी को अधिक देर हो गई। बहुत रात हो गई और मुन्नी के लड़खड़ाते कदमों की आवाज़ आई।

मालिक ने देखा। खामोश रहे। फिर वह उसके निकट आये। मुन्नी ने समझा कि शायद वह क्रोध में उसका गला घोंट देंगे। जब मालिक कुछ न बोले तो उसने समझा कि मालिक के विवेक के कांटे की नोक अब टूट गई है। उसे मालिक से एक क्षण के लिए घृणा हुई। लेकिन मालिक उसका सिर अपनी गोद में लेकर धीरे २ सहलाने लगे। मुन्नी सो गई। मालिक उस रात बिल्कुल न सो सके। एक टक छत की ओर देखते रहे। सुबह मुन्नी उनकी गोद में जागी।

'आज तुम काम पर न जाओ। तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं।' मालिक ने कहा।

'ठीक तो है—।' उसने दृष्टि झुका ली। फिर मुन्नी ने रोना बन्द कर दिया। लेकिन मालिक समझते थे कि अब मुन्नी का अंग २ रो रहा है। मालिक ने एक दो बार सोचा कि वह कुछ खा कर सदा के लिए ज़िन्दगी से किनारा कर लें। शायद कोशिश भी की। फिर सोचा कि वह भी बेटे की तरह एक रात कहीं अंधेरे में गायब हो जाएं। मुन्नी की तकलीफ़ तो कम होजाए। वह केवल स्कूल का काम ही करे। लेकिन मुन्नी इस अंधेरे में निगल ली जाएगी। और वह मुन्नी को इस दुख में देख भी न सकते थे। न जाने कैसे उनके दिल में भयानक सा विचार आया कि मुन्नी.........वह कांप गए। मालिक ने कहा. 'चाय बनाओ।' मैंने चाय बनाई और मालिक ने कहा—'यह दवा मिला दो।' मुन्नी की तबीयत ठीक नहीं। मैंने दवा मिला दी। मुन्नी ने चाय पी। मालिक उसकी ओर भयभीत दृष्टि से देखने लगे। मुन्नी ने कहा कि मेरा शरीर टूट रहा है। वह लेट गई। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ने लगा। शरीर ठण्डा होने लगा। मालिक मुन्नी के निकट बैठ गये। उसका सिर गोद में ले लिया। मुन्नी के शरीर में हरकत खत्म होने लगी।

'मुन्नी'——मालिक चिल्लाए। मुन्नी खामोश लेटी रही। मुन्नी ने मालिक की आख़िरी आवाज न सुनी। मालिक पागलों की तरह अपने बाल नोचने लगे। और मुन्नी के शरीर से लिपट लिपट कर रोने लगे। मालिक, उस दिन से जान पड़ता है कि कमरे में भूत-प्रेत की परछाईं है। एक रात मालिक अंधेरे में गायब हो गये। 'रामाधीन खामोश हो गया। मेरे हाथ में चाय का प्याला कांपा और छूट गया।

'रामाधीन!'

रामाधीन ने मेरी आंखों में उसी तरह खामोशी से देखा, चाय का प्याला संभाला और बाहर चला गया। कदाचित अन्धेरे में अपने आंसू सुखाने या शायद मोहन के शरीर और मुन्नी की आत्मा को तलाश करने अन्धेरे में गायब हो गया। लेकिन जब भी मैं उसका ख्याल करता हूं तो मुझे ऐसा महसूस होता है कि छत की कड़ियां टूट रही हैं। जैसे कोई आदमी कराहता है। छत नीचे की ओर फिसलती दीखती है। दीवारें निकट सरकने लगती हैं। जैसे कब्र में कोई लाश दफ़न हो रही है और मेरे कानों में सिसकता सा रोने का स्वर भीगता हुआ सा आने लगता है।

सिनिक काफ़ी

ग्यारह बजे काफ़ी-हाऊस बन्द हो जाता है और अब ग्यारह बज कर पांच मिनट थे। सामने क्रिस्टल बार से संगीत की लहरें रौशनी की किरणों में घुल कर परदों से छनती हुई बाहर आ रही थीं। सुन्दर को कुछ आशा बंधी और वह क्रिस्टल बार में चला गया। क्रिस्टल बार एक बजे तक खुला रहता है। लेकिन ग्यारह बजे के बाद सब बेयरे चले जाते थे। केवल ओफ़ीलिया ही सर्विस करती थी। इन दो घण्टों में वह वेटरेस से लेकर मैनेजर तक सब काम करती थी। सुन्दर इधर उधर देख कर कोने में पड़ी हुई एक मेज़ पर बैठ गया और पुस्तक पढ़ने लगा।

'ह्स्किी ?'-ओफ़ीलिया ने सहसा उसे चौंका दिया। 'नो—काफ़ी।' —सुन्दर ने पुस्तक पर आंखें जमाये हुए कहा। वह अपने अर्धचेतन में काफ़ी के ध्यान में पढ़ता चला जा रहा था।

'काफ़ी!' ओफ़ीलिया आश्चर्यजनक हो मुस्कराई। 'क्यों! कोई विशेष बात है—?' सुन्दर ने पहली बार पुस्तक से दृष्टि उठा कर उसकी ओर देखा। ओफ़ीलिया के अधरों पर कारोबारी मुस्कान फैल गई और आंखों की उदासी गहरी हो गई। मुस्कान और उदासी की इस मिश्रित मुद्रा ने सुन्दर के शरीर में ऐसी अनुभूति उत्पन्न की जो केवल काफ़ी पीने के बाद ही प्राप्य है।

'क्या नाम है तुम्हारा ?'

'ओफ़ीलिया !'

ओफ़ीलिया काफ़ी लेने चली गई और सुन्दर ने अपने मस्तिष्क में उसका नाम काफ़ी रख दिया। जब वह काफ़ी लेकर आई तो सुन्दर उसकी ओर ज़ोर लब काफ़ी कह कर मौन हो गया। ओफ़ीलिया समझ गई ! लेकिन बात टालते हुए कहने लगी '—इस समय लोग काफ़ी नहीं, मदिरा पीते हैं।' ओफ़ीलिया सुन्दर पर व्यंगात्मक उदास मुस्कान फेंक कर चली गई।

सुन्दर ने काफ़ी की चुस्की ली और पुस्तक पढ़ने लगा। लेकिन डायस पर पाश्चात्य संगीत ने उसका ध्यान पढ़नें से हटा दिया। और वह अपने आस पास की मेज़ों पर मदिरा पान करते मदमस्त लोगों को खुश गप्पीयां करते देखनें पर विवश हो गया। थोड़ी देर के बाद संगीत बन्द हो गया और संगीतकार चले गये। लेकिन अब भी प्यालों की खनक और नशीले कहकहों की ध्वनि, मदिरा और इसकी सुगंध में लिपट कर क्रिस्टल बार के वातावरण में घुली जा रही थी। उसके सामने एक अल्ट्रा-माडर्न जोड़ा मदिरा पान कर रहा था। उन्होंने एक दूसरे की ओर देखा और सहसा हंसनें लगे। पुरुष ने स्त्री को अपनी ओर खींचा और उसका चुम्बन लेने का प्रयत्न किया। लेकिन स्त्री थिरक कर उसकी बाहों के आलिंगन से निकल गई और डायेस पर जा कर प्यानों बजाने लगी। प्याले लड़खड़ाये और प्यानों का संगीत बेसुरा शोर मचाने लगा। गैलरी में एक अधेड़ अर्ध अंग्रेज़ और अर्ध हिन्दुस्तानी पुरुष सीटी बजा रहा था। उस अधेड़ पुरुष ने नीचे झांका और प्यानों की ध्वनि पर सीटी से स्वर देने लगा। स्त्री ने उस की ओर देखा और मुस्करा दी। पुरुष ने स्त्री की मुस्कान का उत्तर अपनी आंख से दिया और उसकी सीटी लय की सीमा से बाहर हो

गई। स्त्री का साथी मदिरा का अन्तिम घूंट भी पी चुका था। वह झूमता हुआ उठा और डायेस पर आकर नाचने लगा। स्त्री ने अपना गाऊन उतार दिया। और छाती और शरीर के कुछ भागों के अतिरिक्त नग्न हो गई। पुरुष ने एक दम उसे आलिंगन में ले लिया और दोनों मदिरा के नशे में चूर लड़खड़ाते हुए कदमों से नृत्यमुद्रा फर्श पर गिर गये। अधेड़ पुरुष ने वेग से सीटी दी और फिर मदिरा पीने में मग्न हो गया। काफ़ी अर्थात आफ़ीलिया ने आकर शीघ्र पर्दा गिरा दिया और फिर काऊंटर पर जा कर बैठ गई। सुन्दर की जिह्वा पर काफ़ी की कड़वाहट जम कर रह गई और उसने पुस्तक उठाई और काऊंटर पर आ गया।

'—इतनी जल्दी ?' —काफ़ी ज़ोर लब मुस्कराई।

'हां।' सुन्दर ने पैसे और टिप देते हुए कहा।

'क्यों, क्रिस्टल बार पसन्द नहीं आया ?'

'नहीं।'

'क्रिस्टल बार में कितनी दिलचस्पियां हैं। यह पुरुष भी बड़ा दिलचस्प है। जब यह मदिरा पीता है तो स्त्री के पीछे भागता है और जब स्त्री के पीछे भागता है तो मदिरा पीता है।' काफ़ी ने दराज़ में पैसे डालते हुए कहा। वह पैसे गिनते २ एकदम रुक गई।

'—यह अधिक है।'—उसने टिप के पैसे लौटाते हुए कहा।

सुन्दर ने प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देखा। 'इस समय मैं मैनेजर हूं। साधारण वेटरस नहीं।' काफ़ी ने बिल देते हुए कहा। सुन्दर काफ़ी की कड़वाहट और मदिरा की गंध लेते हुए क्रिस्टल बार से चला आया। लेकिन सारी रात उसके मस्तिष्क में बार का दृश्य

छाया रहा और उस में काऊंटर पर मौन सतब्ध बैठी हुई काफ़ी की जलती बुझती आंखें चुभती हुई सी नज़र आने लगीं। काफ़ी कितनी मक्खनी-कल्ल है परन्तु कितनी दिलचस्प और खतरनाक भी।

दूसरे दिन वह ग्यारह बजकर पांच मिनट पर क्रिस्टल बार गया। एक वृद्ध फ़ौजी अफ़सर एक युवा एंगलो-इन्डियन लड़की को पैत्रिक स्नेह से पुचकार रहा था और कभी २ उसके गालों को थपथपा देता था।

'यू आर ए होली मदर।'

'यू आर ए वर्जिन मेरी।' वृद्ध फौजी अफ़सर मदिरा पी कर बहक रहा था। सुन्दर अपने विशेष स्थान पर बैठ गया।

'ह्विसकी ?'—काफ़ी ने पूछा।

'नो—काफ़ी !'—सुन्दर ने उत्तर दिया। काफ़ी अपने खुले बालों को झटकती मुस्कराती हुई चली गई।

ग्यारह बजकर पांच मिनट पर क्रिस्टल बार में सुन्दर का आना नियम हो गया। हर बार काफ़ी पूछती 'ह्विसकी ?' और हर बार 'नो-काफ़ी !' कहने पर वह मुस्करा कर चली जाती। एक दिन सुन्दर ने पूछा '—तुम प्रति दिन मुझ से ह्विसकी क्यों पूछती हो—यद्यपि तुम जानती हो कि मैं काफ़ी पसन्द करता हूं।'

'मैंने सोचा एक दिन आप काफ़ी से तंग आ जायेंगे।' वह मुस्कराई।

'क्यों ?' सुन्दर ने आंख झपकाई।

'काफ़ी भी कोई पीने को वस्तु है।'—उसने लाउबालीपन से उत्तर दिया।

'क्यों ?'

'चाय पियो ह्विसकी पियो—यह काफ़ी क्या हुई ?—जिस में न चाय की लज्ज़त, न मदिरा की तलखी, काफ़ी क्या—जैसे चाय में रोमांस भर दिया जाये—एक काल्पनिक चित्र और फिर आदमी बेकार ख्यालों के हजूम में खो जाय।'

'बड़ा विचित्र दर्शन है।'

'मदिरा में तलखी तो है—जीवन की तलखी। एक दिन पी के देखो। सारा जीवन एक पैग में उमड़ आएगा।'

काफ़ी उठ कर जाने लगी।

'तुम सिनिक (Cynic) हो काफ़ी।' सुन्दर को सहसा अनुभव हुआ।

'सिनिक?'—काफ़ी पहली बार खिलखिला कर हंसी। 'कितनी विचित्र बात है? वह ठहाका लगा कर हंसी। उसके स्वर में आकर्षण अवश्य था। एक कारोबारी स्वर और एक मकानीकल मुस्कान। लेकिन इस ठहाके में जैसे नन्हीं २ घंटियां बज उठी हों। बार के संगीत से अधिक सहर—अंगेज़ और काफ़ी के सरूर से अधिक मारम। उसकी मुस्कान फैलती सिमटती रहती थी। लेकिन उसकी नीली २ आंखों की उदासी स्थिर थी। सुन्दर ने उसका नाम 'सिनिक काफ़ी' रख दिया।

एक दिन क्रिस्टलबार बिल्कुल खाली था और काफ़ी भी व्यस्त न थी। सुन्दर ने काफ़ी से कहा '—मैंने पहले तुम्हारा नाम काफ़ी रखा था। लेकिन जब मालूम हुआ कि तुम्हें काफ़ी नापसन्द है तो उसे बदल कर 'सिनिक काफ़ी रख दिया यह नाम तुम्हें पसन्द है ?' सुन्दर ने उस से कहा। 'ब्यूटीफुल, तुम जीनियस हो। सिनिक काफ़ी

अर्थात मदिरा—गाती, नाचती, उछलती, कितना विचित्र !'—वह करीब २ कुर्सी से उछल पड़ी। लेकिन सुन्दर को सब कुछ किसी रहस्य को छिपाने की कोशिश मालूम हुआ।

'सिनिक काफी—तुमने शादी क्यों नहीं की ?'

'शादी !'

सुन्दर ने उसकी तीखी दृष्टि से बचने के लिए काफी की चुटकी ली।

'मेरा विचार है—तमाम पुरुषों को शादी करनी चाहिए और किसी स्त्री को नहीं।' काफी स्वयं ही हंस पड़ी।

'क्या मतलब ?'

'मतलब यह कि तमाम पुरुष मूर्ख होते हैं, तुम नहीं। सुन्दर, पुरुष ! तुम तो बच्चे हो।' काफी ने आंखों ही आंखों में उसे बुलाया।

'क्या तुमने कभी प्रेम किया है?'

'प्रेम ! नानसेन्स ! यहां सब लोग मदिरा पी कर प्रेम करने आते हैं।' उसने बिना दिलचस्पी प्रकट किए कहा और ह्विसकी के पैग को अधरों से लगा लिया।

'क्या तुम्हें यह जीवन पसन्द है—यह कुरूप दृश्य—यह गंदगी ?'

'बहुत ?' काफी शब्द खींच कर बोली। कितना अच्छा जीवन है। सेक्स मानव की स्वाभिक भावना है और उसका प्रत्येक रूप सुन्दर।'

'तो फिर तुम पर्दे क्यों गिरा देती हो।' सुन्दर लाजवाब होकर छटपटा गया था।

'क्या मैं आपके प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देने में विवश हूं ?' काफ़ी एकदम रुष्ट हो गई और ह्विस्की का पैग परे फेंक कर उठ कर चली गई और काऊंटर पर बोतलों को नये ढंग से सजाने लगी जो पहले ही सुन्दर ढंग से पड़ी हुई थीं। उसके शरीर से एक बेचैनी झलक रही थी। सुन्दर उसे काऊंटर पर पैसे देने गया। उसने देखा उसकी आंखों में आंसुओं की चमक थी।

'ले जाइये ये टिकलियां। यह बार है, मधुशाला—काफ़ी हाऊस नहीं! यहां नृत्य है, संगीत है, सब कुछ है।' काफ़ी चिल्लाये जा रही थी। विचित्र लड़की है सिनिक काफ़ी भी, सुन्दर ने सोचा।

दूसरे दिन जब सुन्दर क्रिस्टल बार गया तो सिनिक काफ़ी उससे ह्विस्की पूछने न आई और चुपचाप काफ़ी मेज़ पर रख कर चली गई। महीनों बीत गए। मदिरा में डूबे हुए ठहाके और साज़ बजते रहे। मदमस्तियां और नृत्य जारी रहे। लेकिन सिनिक काफ़ी को जैसे किसी ने गूंगा कर दिया हो, आंखों में आग लगा दी हो। सुन्दर को क्रिसटल बार अब बोर महसूस होने लगा। उसने दो एक बार काफ़ी को बुलाने की कोशिश भी की। लेकिन उसने अपनी कारोबारी मुस्कान के अतिरिक्त कोई दिलचस्पी प्रकट न की। अब भी कई बार मदिरा के नशे में शरीर एक दूसरे से टकरा कर नृत्य मुद्रा में गिर जाते थे। लेकिन अब काफ़ी पर्दे नहीं गिराती थी बल्कि प्यानो के संगीत के शोर में इन मदमस्तों को और नग्न होने में सहायता देती। सुन्दर ने उकता कर क्रिस्टल बार जाना छोड़ दिया।

एक वर्ष बाद जब सुन्दर काश्मीर से वापिस आया तो उसके चेहरे पर भी सिनिक काफ़ी की भांति उदासी छाई हुई थी। उसका

विचार था कि वह काश्मीर की हिमाच्छादित चोटियाँ अपनी छाती पर रख देगा। और उसकी आग को ठंडा कर देगा। जो उर्वशी के प्रेम ने उसकी छाती में भड़का दी थी और जिस ने किसी फ़ौजी अफ़सर से शादी कर के उसकी आग को तेज़ कर दिया है। लेकिन बर्फ़ पिघल गई और आग भड़कती रही। उसने मदिरा से इस आग को ठंडा करना चाहा।

इस समय ग्यारह बज कर पांच मिनट थे। सुन्दर बाहर जाने लगा।

'कहां जा रहे हो सुन्दर, इतनी रात गए ?' उसके मित्र ने पूछा।

'क्रिसटल बार।'

'सुन्दर, तुम पागल हो जाओगे। तुम जीनियस हो।'

'जीनियस ! हर जीनियस पर एक ऐसा समय आता है जब वह या तो पागल हो जाता है या प्राफ़ेट।'

'सुन्दर !'

'मैं गीत बुनता रहा और प्रेम के दिल की धड़कने कार के पहियों के साथ घूमती रहीं। मानव का मस्तिष्क चांदी के सिक्कों में खनकता रहा और जीनियस के चेहरे पर कार धूल उड़ाती निकल गई।' उसकी आंखें शून्य में खो गईं और वह हंस पड़ा।

'तुम कब तक अपने आप को धोखा देते रहोगे ?'

'जब तक धोखा सुन्दर है और सौन्दर्य महज़ एक विडम्बना।' सुन्दर यह कह कर कोट सम्भाल कर बाहर चला गया।

सुन्दर क्रिस्टल बार में अपने विशेश स्थान पर बैठ गया। सिनिक काफ़ी काउंटर पर खड़ी बिल बना रही थी। उसकी आंखों की उदासी एक वर्ष में गहरी हो गई थी। और उसके होंटों की मुस्कान अधिक कारोबारी। काफ़ी उसे देख कर एक दम उसके पास आ गई।

'काफ़ी?'—उसने पूछा।

'नो— ह्विसकी।' सुन्दर ने आंख मिलाये बिना उत्तर दिया।

'ह्विसकी!' वह चौंकी और चली गई और फ़ौरन लौट आयी।

'आपने ह्विसकी कहा है न?' उसने सोचा, कहीं ग़लती न हो गई हो।

'हां, ह्विसकी! कोई विशेष बात है?' सुन्दर चिढ़ सा गया।

'नहीं।' काफ़ी ख़ामोशी से चली गई और ह्विसकी मेज़ पर रख दी और स्वयं काउंटर पर ढंग से रखी हुई बोतलों को नए सिरे से सजाने लगी। सुन्दर ने क्रिस्टल बार में चारों ओर देखा और मुस्करा दिया। उसने गिलास को होंठों से लगाया ही था कि एक झटके से काफ़ी ने उसका गिलास परे फैंक दिया।

'सोरी!' काफ़ी रो सो पड़ी और काउंटर पर चली गई। संगीत एक क्षण के लिए रुक गया! नृत्य एक क्षण के लिये थम गया। अपने आप में डूबे हुए लोग एक क्षण के लिए चौंक पड़े। लोग फिर मदिरा में डूब गये। फिर वही हमाहमी। जैसे कुछ भी

न हुआ हो। काफ़ी काऊंटर पर बोतलों को नये सिरे से तरतीब दे रही थी और रोए जा रही थी। सुन्दर फ़र्श पर टूटे हुए गिलास के रिम पर छलकती हुई ह्विसकी की बून्द को देख रहा था और सोच रहा था कि सिनिक काफ़ी को क्या हो गया है।

आग

कच्ची सड़क से हट कर वह गांव जाने वाली पगडंडी पर हो लिया। उसका गांव अभी दो कोस दूर था। दूर से उसे अपना गांव धूल के गिलाफ़ में लिपटा हुआ मालूम हो रहा था। धूल से उभरते हुए गांव की इस धुन्धली तस्वीर ने उसकी गांव पहुँचने की ख्वाहिश को तेज़ कर दिया। चिलचिलाती धूप में कच्ची सड़क पर धूल उड़ाते २ वह थक गया। उसके पांव में थकन जैसे जम गई हो। उसके गले में कांटे से चुभ रहे थे और भूख के कारण उसकी अंतड़ियां सिकुड़ रही थीं। लेकिन बिना खबर किये अचानक गांव पहुंच कर नाज़ो के चेहरे पर आश्चर्य और खुशी की झलक देखने की आकांक्षा इस थकन, भूख और प्यास पर भारी हो गयी। वह इसी आकांक्षा के अंतर्गत अपने होंटों को खुश्क जुबान से तर करने की चेष्टा करते हुये अपने विचारों में खोया हुआ चला जा रहा था। पगडंडी से तनिक हट कर कुछ क़दमों के फ़ासले पर उसे रहट की आवाज़ सुनाई दी। उसके गले का कांटा तेज़ी से हरकत करने लगा और वह पानी पीने रहट की ओर मुड़ गया। रहट पर करीब के ही किसी गांव के दो आदमी बात चीत कर रहे थे। उसने झुक कर मिटी के लोटे को मुंह लगाया और घोड़े की तरह पानी पीना शुरु कर दिया। बड़ी मुद्दत के बाद उसने इस तरह रहट का ठंडा पानी पिया था। उसने साफ़े से मुंह साफ़ किया और दो एक मिनट सुसता लेने के

लिये रहट के पास ही पत्थर पर बैठ गया। एक क्षण के लिए उसके दिल में विचार आया कि वह इसी तरह नीम की छाया में पत्थर पर बैठा रहे और रहट की आवाज़ सुनता रहे। सामने धूप है, गरमी है और धूल है लेकिन रहट पर बैठे २ उसे कितना आनन्द प्राप्त हो रहा है।

'—कौन गांव जाना है?'—उन आदमियों में से एक ने पूछा।

'—रहलन।'

'—यहीं पास ही।'—उस आदमी ने उसके गांव की ओर गरदन घुमा कर कहा। एक बार फिर उसके मस्तिष्क में धूल में लिपटे हुये गांव का चित्र उभरने लगा और सब यादें और वलवले उसके मस्तिष्क में घूम गये।

'—कहां से आये हो?' दूसरे आदमी ने पूछा।

'—लाम से।'

दोनों आदमियों की जिज्ञासा बढ़ गई और उन्होंने उस पर प्रश्नों की बोछाड़ कर दी। लेकिन वह किसी भी प्रश्न का उत्तर देने के लिए तैयार न था। वह जल्दी जल्दी अपने गांव पहुँच जाना चाहता था।

'—किसके घर जाना है?' यह उनका आखिरी प्रश्न था।

'—शरीफ़दीन के।'—उसने उत्तर दिया।

'—शरीफ़दीन के?'......प्रश्न पूछने वाला एक क्षण के लिये खामोश रहा.........'वही जिसकी भाबी अपने यार के साथ भाग गई है।'

वह एक क्षण के लिए स्तब्ध रह गया। उसने सम्भलते हुये पूछा।

'—किस शरीफ़दीन की बात कर रहे हो?'

'—वही शरीफ़दीन, लंगड़ा। मुन्शी शरीफ़दीन।' — दोनों आदमियों ने उत्तर दिया।

'—शरीफ़दीन लंगड़ा...... मुन्शी शरीफ़दीन......उसका सगा भाई।' उसके मस्तिष्क में जैसे सनसनाती गोली धंस गई। उसकी पत्नी किसी के साथ भाग गई! उसके क़दम लड़खड़ाये और वह तुरन्त ही सम्भल गया। वह यह पूछने का साहस न कर सका कि उसकी पत्नी क्यों और किसके साथ भाग गयी है? वह यह भी न बता सका कि वह उस कलमोही का पति है। केवल वह इतना ही कह सका—'हां भाई मुन्शी शरीफ़दीन के? वह मेरे दूर के रिश्तेदार हैं।'—और वह भारी क़दमों से वहां से चल पड़ा लेकिन उसके क़दम उसे पीछे चलने के लिए मजबूर कर रहे थे। क्या वह अपने गांव जा रहा है, जहां नाज़ो थी? उसने सोचा था कि नाज़ो खेत पर खड़ी उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी और अचानक उसे देख कर खुशी से चीख उठेगी। लेकिन नाज़ो भाग गई? उसे विश्वास नहीं हो रहा था। नाज़ो उससे बहुत प्यार करती है। शादी से पहले वह उससे छिप २ कर मिला करती थी। वह उसकी चौड़ी छाती पर सिर रख कर और अपनी आंखों में आंसु भर कर कहा करती – 'तुम्हें मेरे सिर की क़सम जो मुझे छोड़ जाओ।' वह उसके घर आ कर बैठ गई थी। जब उसके रिश्तेदार उसे समझा बुझा कर अपने घर ले गये थे तो उसकी एक ही ज़िद थी कि या तो रमज़ानी की बारात यहां आयेगी या मेरी मयीत निकलेगी यहां से। उसने अपनी ज़िद

पूरी करके छोड़ी। लोगों के लांछन सहन किए, ताने बोल सहे। वह नाज़ो अब किसी और के साथ भाग गई। रमज़ानी को महसूस हुआ जैसे वह किसी भयानक स्वप्न से जागा है। उसे अब भी वह दृश्य याद है जब उसे लाम पर जाने को आज्ञा मिली थी। नाज़ो कितना रोती थी! उसका आंचल थाम २ कर रोती थी। वह उससे पागलों की तरह लिपट रही थी—लेकिन अब वह किस मुंह से गांव जाएगा। गांव वाले उसपर उङ्गलियां उठाएंगे। मुंह पीछे हंसेंगे। कहेंगे 'लो आ गया नाज़ो का गबरु जवान, गया तो था कमाने और खो बैठा नार।' इन ख्यालों में डूबा हुआ रमज़ानी आगे बढ़ता जा रहा था। लेकिन जैसे कोई उसके पांव धरती के नीचे से खींच रहा था। वह महसूस कर रहा था कि लाम में खाई हुई गोली बाज़ू से निकल कर उसके दिल में जा लगी है। उसे अपने शरीर से जान निकलती नज़र आ रही थी। वह निढाल सा हो कर शीशम के पेड़ के नीचे बैठ गया और दोनों बाहों में अपना मुंह छिपा कर सोचने लगा। उसके दिल में बार बार नाज़ो की बेवफ़ाई चिंगारी की तरह लपकती थी और उसके ख्यालों को जला देती थी। वह दुविधा में था कि गांव जाए या यहीं से ही लौट जाए। जब उसे तनिक होश आया तो उसने फैसला कर लिया कि वह अपने गांव वापिस नहीं जाएगा।

रमज़ानी वापिस मुड़ा और घाड़े वाह गांव की तरफ़ चल पड़ा। इस गांव में उसका प्रिय मुहमदा रहता था। वह सोचने लगा कि वह मुहमदे से क्या कहेगा। वह पूछेगा जब वह लाम से आ गया है तो गांव वापिस क्यों नहीं जाता। शायद उसे भी मालूम हो कि नाज़ो भाग गई है। वह तो शर्म से मर जाएगा। मित्र के सामने कैसे नज़र

उठाए गा। उसके मस्तिष्क में विचित्र वेदनापूर्ण बवंडर उठने लगा। जब शाम की छाया गहरी होने लगी तो वह थका हारा और उदास घोड़ेवाह पहुँचा। मुहमदे ने जैसे ही उसे देखा वह आश्चर्य और खुशी से उछल पड़ा और उससे लिपट गया।

'—ओ रमज़ानी मेरे जानी...मैं तुम्हें देख रहा हूं न रमज़ानी को, अपने जिगरी दोस्त को.........।'

रमज़ानी को समझ न आया कि इसमें आश्चर्य की क्या बात है? उसके दिल में चुभन तेज़ हो गई। जैसे मुहमदे को नाज़ो के भागने का ज्ञान है।

'—मुहमदे हैरान क्यों हो रहे हो? मैं कोई मर थोड़े ही गया था।' रमज़ानी ने रूखे स्वर में कहा।

'—ओ नेकबख्ता हमारे लिए तो तुम मर ही गए थे। सारा गांव तुम्हारा सोग मना चुका है और तुम............।'

रमज़ानी को जब मालूम हुआ कि गांव में उसके मरने की खबर फैल चुकी है तो उसके मस्तिष्क में एक बार फिर संदेह पैदा होने लगा। शायद नाज़ो इसी लिए भाग गई हो, लेकिन यह खबर किसने और क्यों फैलाई? उसके दिल का बोझ तनिक हल्का होने लगा। लेकिन फिर जैसे वह सहस्त्रों मन के बोझ के नीचे दब गया हो, शायद नाज़ो ने ही दूसरी शादी करने के लिए यह खबर फैला दी हो......जवान स्त्री कैसे तीन वर्ष की जुदाई बरदाश्त करती। इस ख्याल के आते ही रमज़ानी को एक बार फिर अपने दिल में गोली की ज़हरीली हरकत महसूस होने लगी।

रमज़ानी इस दुख में अपने आप को भूल बैठा। उसने मुहमदे

से नाज़ो के बारे में न ही कुछ पूछा और न ही मुहमदे ने उसे कुछ बताया। मुहमदे के पास रहते हुये उसे दो दिन हो गये थे। लेकिन उसकी आत्मा उसके गांव में भटक रही थी। बार बार उसे यही ख्याल सता रहा था कि वह एक बार अपने गांव ज़रूर जाए और फिर चाहे गोली मार के मर जाए। लेकिन गांव कैसे जाए। लोग उसे मरा हुआ समझ बैठे हैं। नाज़ो भाग गई है। उसे अपनी ज़िन्दगी में सांप के फुन्कारने की दशा महसूस होने लगी। वह बार बार यही सोचता काश वह लाम में सचमुच ही मर गया होता तो कितना अच्छा था। यह दुख भरी खबर तो सुनने में न आती।

एक रात रमज़ानी ने स्वपन में देखा कि उसके गांव में उसके मकान की छत पर नाज़ो खड़ी पुकार रही है।

'नाले धार कढां नाले रोवां, माही मेरा लाम नूं गया।'

उसे ऐसा महसूस हुआ जैसे कोई उसके दिल के करीब गा रहा है। वह सहसा उठ बैठा। उसने स्वप्न भूलने की कोशिश की। लेकिन उसके सामने नाज़ो छलावे की तरह कभी सामने आ जाती और कभी गायब हो जाती। वह छत से नीचे उतर आया। उसने अपने शरीर पर चादर लपेट ली और मुंह को अच्छी तरह ढांप लिया ताकि उसे कोई देख न ले और वह रहल की ओर चल पड़ा।

अंधेरी रात में दूर २ से गीदड़ों की आवाज़ आ रही थी। उसके आगे २ नाज़ो की परछांई भागी जा रही थी। वह तेज़ २ क़दम उठाता अपने गांव पहुंच गया। वह गांव इस तरह आया था जैसे शत्रु का कोई भेदी भेद पाने आया हो। वह दबे पांव अपने मकान की ओर बढ़ा। अंधेरे में उसका मकान किसी भूत वाले

मक़बरे की तरह भाएं २ कर रहा था। वह दरवाज़े के निकट आकर रुक गया। उसने दरवाज़े पर दस्तक देने के लिए हाथ बढ़ाया। लेकिन वह रुक गया। अब उसे दरवाज़ा कौन खोलेगा? आधी २ रात उसकी दस्तक पहचान कर खट से दरवाज़ा खोलने वाली नाज़ो तो अब यहां नहीं। लेकिन उसके हाथ सहसा कुन्डी की तरफ़ बढ़े और वह धक से रह गया। जैसे उसके हाथ पर किसी ने बरफ़ की सिल रख दी हो। दरवाज़े पर ताला लगा हुआ था। उसने सोचा क्या शरीफ़दीन भी यहां नहीं? संदेह, घृणा और क्रोध ने मिलकर उसके मस्तिष्क में पागलपन की दशा पैदा कर दी और वह अंधाधुन्ध दरवाज़े पर घूंसों की वर्षा करने लगा। पड़ोस का दरवाज़ा खुला। किसी ने बाहर झांक कर देखा और एक दम अन्दर भाग गया।

'भूत – रमज़ानी का भूत'—उसने सुना और एकदम बहुत से दरवाज़े खुले। रमज़ानी डर कर दीवार की छाया में छिप गया। लोग लाठी डंडा लिए चारों ओर से निकल आए। और उसके मकान के चारों तरफ़ फैल गए। उसने भागने की कोशिश की लेकिन वह चारों ओर से घिर चुका था। लोग चिल्ला रहे थे। शोर मचा रहे थे। पुरुष बाहर आ गए थे। स्त्रीयां और बच्चे दहलीज़ से लग कर खड़े हो गए। रमज़ानी का भूत देखने के लिए लोगों के चेहरे भय और आश्चर्य से परेशान नज़र आते थे। कुछ लोगों ने उसे घसीट कर भीड़ में धकेल दिया।

'—कौन हो तुम?' आवाज़ आई।

रमज़ानी डर के मारे कुछ उत्तर न दे सका।

'—कौन हो? भूत हो, प्रेत हो, आदमी?'

'—मैं रमज़ानी हूं। मुन्शी शरीफ़दीन का भाई...नाज़ो का...' और उसकी ज़ुबान लड़खड़ाने लगी। लोगों में सनसनी फैल गई। रमज़ानी का पड़ोसी रहमान आगे बढ़ा। उसने रमज़ानी के चेहरे से चादर हटाई। रमज़ानी डर से कांप रहा था।

'—ओ ए रमज़ानी...'वह आश्चर्य से चौंका ..'तुम्हारी तो मौत की खबर गांव में आई थी?'

रमज़ानी खामोश रहा। रहमान रमज़ानी को अपने घर ले गया। भीड़ कानाफूसी करती हुई बिखर गई। रहमान के घर मुहल्ले के दो चार वृद्ध और रमज़ानी के यार दोस्त एकत्र हो गए। सब लोगों के चेहरों पर आश्चर्य और जिज्ञासा के चिन्ह झलक रहे थे।

'—लेकिन मेरी मौत की खबर फैलाई किसने ?' रमज़ानी पूछे बिना न रह सका।

'—तेरे सगे शरीफे ने और फैलाने वाला कौन था...?' रहमान ने उत्तर दिया।

—'शरीफे ने...आखिर क्यों ? उसे कहां से खबर मिली... या यूं ही फैला दी?' रमज़ानी ने अपने मस्तिष्क में उठते हुए प्रश्नों का उत्तर सब से पूछा।

'—मालूम नहीं। वह कुछ सनकी हो गया था। हर किसी से झगड़ा फ़साद।' एक वृद्ध ने कहा और खामोश हो गया।

'—उसके सनक ने और तुम्हारी मौत की खबर ने बेचारी नाज़ो—'वृद्ध ने आंखों से आंसू पूछने की कोशिश की। रमज़ानी का

दिल धड़कने लगा। जिस बात का डर था वह आखिर करीब आ ही पहुंची।

'—रमज़ानी तुम बड़े खुशकिस्मत थे जो ऐसी नेकबख्त बीवी मिली लेकिन'—रहमान ने उदास स्वर में कहा।

रमज़ानी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। ऐसी आवारा और बदचलन स्त्री के लिए यह वचन सुन कर उसका क्रोध तेज़ हो गया। शायद यह लोग उसे चिढ़ाने के लिए कह रहे हैं। या शायद वह उसका दिल रखना चाहते हैं। लेकिन रमज़ानी नाज़ो के बारे में जानने की इच्छा के बावजूद भी कोई प्रश्न न पूछ सका। उसके दिल में प्रतिशोध की आग सुलग रही थी। उसके दिल में केवल एक भावना थी प्रतिशोध। नाज़ो और उसके यार का क़त्ल।

'—हां क्यों न हो। आखिर ऐसी औरत किस खुशनसीब को मिलेगी, जो खावंद की मौत की खबर सुनकर यार के साथ भाग निकले...'। रमज़ानी अब अपने अन्दर कुछ सिमेटने की शक्ति न रखता था।

'—क्या बक रहे हो रमज़ानी?' रहमान चिल्लाया।

'—दिमाग तो नहीं चल गया, लाम में?' वृद्ध ने कहा।

'—दिमाग ही तो चला गया है लाम में वरना वह भाग क्यों जाता?' रमज़ानी के दिल में घृणा का सागर उमड़ आया।

'कौन भागा है किस के साथ? उस बेचारी ने तो तुम्हारे ग़म में अपने आप को जला लिया......बेचारी नाज़ो अब इस दुनिया में नहीं!'

'—क्या नाज़ो—'

सबके डूबे हुए चेहरे इस बात को सिद्ध करते थे कि नाज़ो मर गई। रमज़ानी के दिल से गोली उछल कर बाहर आ गई। लेकिन एक ऐसा घाव छोड़ गई जो कभी भी न भर सकता था। वह फूट २ कर रोने लगा :

'—नाज़ो, नाज़ो! मैं जिन्दा हूं। मैं लाम में नहीं मरा......
मैंने तुम पर शक किया......नकबख्त.........'

और वह अपने आप को कोस रहा था और चिल्ला रहा था। लोगों के चेहरे वेदना शील और मौन थे। जब रमज़ानी का ग़म ज़रा हल्का हुआ तो उसने पूछा......

'—लेकिन शरीफा कहां है ?'

'—वह तो उसी दिन से ग़ायब है जब से नाज़ो का जनाज़ा निकला। जनाज़े में भी शामिल नहीं हुआ।' रहमान ने बताया। रमज़ानी को एक दम ख्याल आया कि नाज़ो को शरीफ़दीन ने मार दिया है। शरीफ़दीन केवल नाम का ही शरीफ़ है। मगर अव्वल दर्जे का जुआरी और फरेबी। गांव भर के लोग उससे परेशान थे। बेकार उसका दिमाग़ हमेशा बैठे २ शैतानी हरकतें सोचता रहता था।

रात समाप्त हो गई। रमज़ानी अपने घर आया। उसने ताला तोड़ा और अन्दर दाखिल हुआ। यह उसका घर नहीं था। किसी प्रेत का बसेरा था। धूल और मिट्टी से अटे हुए फ़र्श, काली दीवारें छिपकलियां और चमगादड़ों के बसेरे, मकड़ी के जाले' मकान के अन्दर विचित्र सी गंध बसी हुई थी। इस मकान में घुसते ही उसका सांस घुटने लगा। आंगन में नीम का वृक्ष उसी तरह खामोश खड़ा था। जैसे नाज़ो की मृत्यु पर आंसू बहा रहा हो। उसके नीचे अनगिनत पीले और मुरझाये हुए पत्ते बिखरे पड़े थे। वह अपने कमरे में दाखिल हुआ

जहां कभी उसने फूलों की सेज सजाई थी। सामने दीवार काली हो रही थी। दीवार के साथ ही जली हुई चारपाई का बचा खुचा भाग पड़ा हुआ था। यह चारपाई कैसे जल गई? एक के बाद दूसरा सदमा रमज़ानी के लिए असहनीय हो रहा था। वह मकान के बाहर आ गया। यह माजरा क्या है? किस से पूछे? कौन उसकी कहानी सुनेगा? वह मास्टर जी से मिलने चला गया। जब रमज़ानी को लाम पर जाने की आज्ञा मिली थी तो मास्टर जी उन दिनों गांव में नये नये आये थे।

रमजानी को मास्टर जी पर फ़कीरों और पीरों से बढ़कर विश्वास था उसके ख्याल में मास्टर जी ही इस गुथी को सुलझा सकते हैं। मास्टर जी उसे घर पर ही मिल गये। रमज़ानी को देख कर उन्हें भी आश्चर्य हुआ। लेकिन उन्होंने प्रकट नहीं होने दिया। रमजानी ने शुरु से लेकर आखिर तक सारा हाल मास्टर जी को सुनाया। रमज़ानी के आश्चर्य और दुःख की कोई सीमा न रही जब मास्टर जी ने उसे बताया कि नाज़ो मिट्टी का तेल कपड़ों पर छिड़क कर आग लगा कर जल गई......'लेकिन मास्टर जी उसने ऐसा क्यों किया?' अत्यन्त वेदना के कारण रमज़ानी बेक़ाबू होकर बच्चों की सी जिज्ञासा से प्रश्न पूछ रहा था।

'—रमज़ानी जब तुम आग बरसाने और आग खाने लाम पर गये तो यह भूल गये कि तुम अपने घर में ही आग लगा कर चले हो। तुम्हारे पेट में नरक की आग जल रही थी तो तुम्हारे पीछे रहने वालों का भी पेट था नरक की आग की तरह दहकता हुआ।'

'—क्या नाज़ो इस आग से तंग आकर आग में जल मरी?' रमज़ानी ने बेताब हो कर पूछा।

'—हां भाई। वह बेचारी तो मेहनत मज़दूरी करके रूखा सूखा

खा लेती लेकिन मुन्शी शरीफ़दीन.........'

'—क्या शरीफ़दीन ने उसे मारा है ?' रमज़ानी ने पूछा।

'—बस यही समझ लो कि उसने मारा है......वह कुछ रुपयों के लिये नाज़ो को दूर के एक गांव के किसी बूढ़े खोसट के हाथों बेचना चाहता था। क्या करता, मुफ़्त खाने की आदत बुरी है।...एक दिन तो उस बूढ़े को अपने घर भी ले आया। सुनते हैं उसने नाज़ो को यह भी कहा था कि तुम लाम में मर चुके हो अब बाकी जिन्दगी यूं परेशान होती हो......जब उस बूढ़े ने अपनी नफ़सानी आग को ठण्डा करने के लिए उस नेकबख्त पर हाथ डाला.........'

रमज़ानी इसके आगे कुछ न सुन सका। उसने दांत पीसे। उसकी मुट्ठियां मिच गईं। उसकी आंखों में खून की आग बरसने लगी। उसे ऐसा महसूस हुआ कि उसका सारा शरीर आग में जल रहा है। उसके दिल से शोले लपक लपक कर बाहर निकलने के लिए बेताब हैं।

'—उस नेकबख्त लाज की मारी ने अपने आप को आग में जला कर पाक कर लिया।'

—मास्टर जी यह कह कर खामोश हो गये। रमज़ानी पागलों की तरह चिल्लाने लगा। 'मैं शरीफ़ का खून चूस लूंगा'...और रमज़ानी इस पागल पन की दशा में बाहिर निकल गया। मास्टर जी उसे रोकने के लिए लपके। लेकिन रमज़ानी पर तो खून सवार था। उसके दिल में केवल एक भाव था जो लावे की तरह दहक रहा था। प्रतिशोध...... जो पानी नहीं केवल खून से ही ठण्डा हो सकता है। और मालूम नहीं रमज़ानी कहां गायब हो गया। क्योंकि उसके बाद गांव वालों ने फिर उसे कभी न देखा।

कुछ दिन हुए खबर मिली कि रहलन गांव के रमज़ानी को हत्या के मुकदमे में फांसी का दण्ड मिला । स्पष्ट है कि रमज़ानी ने शरीफ़दीन की हत्या कर दी। क्योंकि जब उसे फांसी का दण्ड मिला तो लड़ाई में उसके हाथों मारे गए लोगों के लिए नहीं बल्कि किसी राक्षस वृत्ति के आदमी को कत्ल करने की सज़ा में उसे फांसी मिली है । और यह राक्षस वृत्ति वाला आदमी उसके सगे भाई शरीफ़दीन के अतिरिक्त और कौन हो सकता है ? इस तरह एक आदमी की ज़िन्दगी की कहानी तो समाप्त हो गई। लेकिन उस आग का क्या बनेगा जिसने इस कहानी को जन्म दिया है।

ब्लैक मैजिक

यद्यपि परेशान होने का कोई विशेष कारण न था तो भी यह प्रश्न सागर में उठी हुई लहर की भांति मेरे मस्तिष्क में ज्वार-भाटा उत्पन्न कर देता है कि मुझे मिस आशालता को काम से पृथक करना चाहिए था, या नहीं ? मिस आशा आज से कोई पांच छः वर्ष पहले मेरे दोनों बच्चों की गवर्नेस थी। जब मुझे संदेह हुआ कि उसे क्षय हो गया है, तो मैंने तुरन्त उसे जवाब दे दिया। इन परिस्थितियों में काम और जीवन उसके लिए पर्याय बन चुके थे। उसे जवाब देते हुए भी मैंने कई बार सोचा कि अगर उसे काम करने दिया जाय, तो भी परिणाम मृत्यु ही है। उसे आराम की आवश्यकता है। और उसे बेकार होकर भी मृत्यु का आलिंगन करना पड़ेगा, क्योंकि उसे अच्छा भोजन चाहिए। बेकारी और क्षय उसे शीघ्र ही मृत्यु के मुंह तक खींच लायेंगे। किन्तु मेरे लिए उसे काम से पृथक कर देना उचित ही था। परन्तु आज रेनु से जब मुझे मालूम हुआ कि मिस आशा 'आशा मोहन डे' के नाम से अभी तक जीवित है, तो कुछ आश्चर्य, कुछ लज्जा और कुछ खुशी का अनुभव हुआ।

मैं रायसाहब घनश्यामदास से मिलने लखनऊ गया था। कुछ ही दिन हुए, उनकी छोटी लड़की रेनु अस्वस्थ रहने के कारण पेरोल पर रिहा होकर आयी हुई थी। मैंने सोचा, उससे भी मिल लिया जाय।

शाम को हम सब लोग लान में बैठे चाय पी रहे थे। राय

साहब बोले 'देखिए न, माथुर साहब । मैं कहता हूं अब ज़रा ध्यान लगाकर पढ़-लिख डाले, यही उम्र होती है पढ़ने लिखने की। एम० ए० कर ले, फिर जो जी में आये करे। मगर यह लड़की ऐसी ज़िद्दी है कि किसी बात पर कान ही नहीं देती। ऐसे–वैसे लोगों के साथ इसे देखकर मुझे बेहद रंज होता है।'—राय साहब ने रसगुल्ला मुंह में डाल लिया और फिर रेनु की ओर देखने लगे। रेनु चाय बनाने में व्यस्त थी।

'—इसने तो इस हुल्लड़बाज़ी में अपनी सेहत भी खराब कर ली है।' राय साहब ने फिर कहा।

मैं चाय पीने में व्यस्त था। वास्तव में अपनी समस्त ज़िम्मेदारियों के बावजूद भी मुझे इन सब बातों से एक खामोश सी सहानुभूति थी। रेनु ने अपने लिए चाय बनायी और प्याली उठायी, तो मैंने कहा '—क्या आप चा य में दूध शक्कर नहीं डालती ?'

'—जी नहीं, मुझे ब्लैक टी पसन्द है' रेनु ने कहा ।

'—सत्यानास कर लिया है अपनी तन्दुरुस्ती का ब्लैक टी पी पीकर, माथुर साहब । न जाने उस लेक्चरर ने इस लड़की पर क्या जादू कर दिया !'—राय साहब बोले ।

'—आप तो हर बात में आशा मोहन डे को खामखाह घसीट लाते हैं।'—रेनु ने विरोध किया।

'—उसकी ज़रा शक्ल तो देखो। जैसे बरसों से दिक़ की मरीज़ हो। मालूम नहीं किस हड्डी की बनी है कि अभी तक जिये जा रही है ।' —और राय साहब चाय पीने में व्यस्त हो गये।

'—आशा मोहन डे ?' मेरे मस्तिष्क के कोने से एक धुंधली सी स्मृति उभर आयी।

'—इसकी एक लेक्चरार है। मुझे तो उसके तौर-तरीके बिल्कुल पसन्द नहीं!' राय साहब ने राय दी।

'—क्या नाम बताया था आपने?' मैंने उसका नाम फिर उसके मुंह से सुनना चाहा।

'—आशा मोहन डे।' रेनु ने बताया।

'—आशा मोहन डे' मैं गुनगुनाया। 'क्या वह लखनऊ की ही रहने वाली हैं?' मैंने पूछा।

'—नहीं, दिल्ली से आयी हैं। दिल्ली युनिवर्सिटी की ऐम० ए० हैं।' रेनु बोली।

मैं आशालता को जानता था, जो मेरे बच्चों की गवर्नेस थी। लेकिन वह केवल बी० ए० थी। फिर मुझे ऐसा लगा कि कहीं आशालता ही आशा मोहन डे न हो। वह ब्लैक टी ही पीती थी और रेनु के तौर-तरीके और बात-चीत का ढंग भी उससे मिलता जुलता है।

'—वह छरहरे बदन की सांवली सी लड़की?'—मैंने बहुत ही धीरे से पूछा।

'—जी, हां',—रेनु ने दिलचस्पी लेते हुये कहा '—मिस्टर माथुर, क्या आप उन्हें जानते हैं?'

सम्भवतः वही हो, मैं सोचने लगा। मेरी उप-चेतना से एक बार आशालता का ख्याल चेतना में लपक आया, उसके माथे पर चोट का निशान था। मैंने कहा '—क्या उसके माथे पर किसी चोट का निशान है?'

'—जी, हां, और मज़े की बात यह है कि वह चोट चाय की प्याली से लगी थी।'—रेनु ने मुस्कराते हुए कहा।

मुझे विश्वास सा हो चला कि आशा मोहन डे मिस आशालता के अतिरिक्त कोई नहीं हो सकती।

'—आप कुछ खो से गये?'—रेनु ने मेरे मस्तिष्क की परेशानी भांप ली।

मेरे मस्तिष्क में सागर की तह से उठी हुई लहर का ज्वार-भाटा था। इस बार लहर का ज़ोर और शोर कई गुना अधिक था। जब भी मुझे मिस आशालता का ख्याल आता है, ऐसा प्रतीत होता है कि कोई स्वप्न देख रहा हूँ। स्वप्न में उसका उदास चेहरा और चमकदार आंखें उभरने लगती हैं और धीरे २ वह अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ स्पष्ट हो आती है और एकदम अंधेरे में उसकी मुस्कराहट रोशनी की किरण की तरह फूटने लगती है और वह कह उठती है—'जब सपने सचाई बनने लगते हैं, तो अकस्मात् ही कोई सचाई स्वप्न बन जाती है।'—और फिर सहसा मेरे मस्तिष्क से वह अदृश्य हो जाती है।

'—मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि उनके जीवन में कोई बहुत बड़ी दुखपूर्ण घटना हुई है। मालूम नहीं क्या, लेकिन उनके जीवन पर रहस्य की एक झिल्ली सी छायी हुई है।'—रेनु ने कहा।

मेरे मस्तिष्क में आशालता के जीवन का चल-चित्र उभरने लगा। वह एक बुद्धिमती गवर्नेस थी। परन्तु मैं उसके रोग के कारण विवश था। एक दिन वर्षा ज़ोरों से हो रही थी। आशालता कुछ उदास थी, उसके चेहरे पर जैसे काले बादलों की छाया सी पड़ रही थी। उसके लिये इस मूसलाधार वर्षा में घर जाना सम्भव न था

श्रोर वह वर्षा के थमने का इन्तज़ार कर रही थी। मैंने उसे चाय पीने को कहलवाया। उसने चाय बनायी, लेकिन उसने अपनी प्याली में दूध-शक्कर नहीं मिलायी।

'—क्या आप चाय में दूध-शक्कर नहीं मिलातीं ?'—मैंने पूछा।

'—जी नहीं, मुझे ब्लैक टी पसन्द है',—उसने जवाब दिया।

'—आप ब्लैक टी क्यों पीती हैं ? यह स्वास्थ्य के लिये हानि-कारक है।'—मैंने कहा।

'—ऐसे ही',—उसने कहा और उसके चेहरे पर काले बादल का एक टुकड़ा सहसा सिमट आया।

'—आप इस आयु में ही अपना स्वास्थ्य नष्ट कर लेंगी', —मैंने नसीहत की।

'—मेरे एक मित्र थे, '—उसने कहा.'—वह बहुत अधिक सिगरेट पीते थे। मैंने उन्हें एक बार कहा कि ज्यादा सिगरेट पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, तो कहने लगे, अगर कोई आदमी लगातार सिगरेट पीने का आदी हो और बीस वर्ष तक निरन्तर सिगरेट पीता रहे, तब जाकर कहीं खतरा होता है कैन्सर का। और फिर अचानक कहा, और कैन्सर तो सिगरेट पीने के बिना भी हो सकता है।'—मिस आशालता ने यह कह कर मानो ब्लैक टी पीने का कारण बतला दिया।

'—आपकी बात खूबसूरत है, लेकिन सही नहीं।' —मैंने कहा।

'—और आप की बात सही है, लेकिन......।'

'—खूबसूरत नहीं।' मैंने कहा।

वह मुस्करायी और मैं खिलखिला कर हंस पड़ा। लेकिन तभी मुझे प्रतीत हुआ कि मिस आशालता मुस्करायो नहीं थी, मैंने यांही ऐसा अनुभव किया था, क्योंकि दूसरे ही क्षण उसके चेहरे पर दुःख और व्यथा की हल्की सी चादर फैल गयी थी।

मिस आशालता मुझसे भली भाँति परिचित थी, इस लिये थोड़े से अनुरोध के बाद उसने बात शुरू की—'मेरे एक मित्र थे, जिनके बारे में अभी मैंने बताया था, मुझे उनकी ज़िन्दगी से प्यार था और अब उनकी मृत्यु पर ईर्ष्या होती है।' मैं चुपचाप सुनता रहा—'वह अजन्ता स्कूल आफ आर्ट में अंग्रेज़ी साहित्य के प्रोफेसर थे। वह हमेशा ब्लैक टी पीते थे। हमने कई बार पूछा कि आप ब्लैक टी क्यों पीते हैं, तो उन्होंने बताया कि मैं हर वस्तु को उसके वास्तविक रङ्ग में ही लेना चाहता हूं। उनमें और कोई विशेष बात न हो, लेकिन बात बड़ी खूबसूरत करते थे। उन्हें निकट से देखने के बाद ऐसा प्रतीत होता था कि वह जीवन को एक नये, अछूते सांचे में ढालने में तत्पर हैं। आर्ट स्कूल के प्रबंधकर्ता हमेशा उनपर कड़ी निगरानी रखते थे। उनके ढंग में एक ऐसा लोचालोपन था, जिससे हम सब प्यार करते थे। परन्तु प्रबंधकर्ता की दृष्टि में उसकी हद वहां जा मिलती थी, जहां से अनैतिकता का आरम्भ होता है। वह अपने ढंग से विवश थे और प्रबन्धकर्ता अपने सिद्धान्तों के कारण उनसे परेशान थे। परिणाम-स्वरूप मोहन डे को काम से अलग होना पड़ा। प्रबन्धकर्ता ने यह बात फैलायी कि मोहन डे चाय पीता है, गीत लिखता है, कविताएं सुनाता है और युवा लड़के लड़कियों को......।'

'—गुमराह करता है।' मैंने कहा।

'—क्या आप उन्हें जानते हैं ?'—मिस आशालता ने उत्सुकता से पूछा।

मुझे मोहन डे के विषय में कुछ मालूम नहीं था। मैंने कहा—'अपराधों के दण्ड के इतिहास की यह एक अमर कहानी है कि प्रत्येक उस मनुष्य को कठिनायों का सामना करना पड़ता है, जो लोगों को उनकी गति से अधिक तेज़ अपने हमराह ले जाना चाहता है।'

मेरी वह बात सुनकर मिस आशालता के चेहरे पर विश्वास की एक लहर दौड़ गयी। उसने चाय की एक चुसकी ली और मेज़ पर झुक गयी। '—मिस्टर माथुर, अगर मैं यह कहूं कि मुझे उनसे प्यार था, तो आप को आश्चर्य न होना चाहिए।'

मैं कहना चाहता था कि यह तो मुझे शुरू में ही मालूम हो गया था, लेकिन मैंने कहा '—ऐसे आदमी पर प्यार के अतिरिक्त और क्या हो सकता है ?'

'—मैं कह रही थी कि वह बड़े बुद्धिमान, सचेत और जागरूक व्यक्ति थे। लेकिन उनका ढंग कुछ ऐसा था कि..... क्षमा कीजिए, बात ब्लैक टी की थी। वास्तव में मोहन डे इससे पहले भी कई बार बेकार रह चुके थे। बेकारी के दिनों में ही उन्हें ब्लैक टी की आदत पड़ गयी थी। वास्तव में ब्लैक टी वह आर्थिक कारणों से पीते थे, जो बाद में आर्ट स्कूल के लड़के लड़कियों में एक फैशन-सा बन गया। अचम्भे की बात यह थी कि ब्लैक टी पीने वाले सब-के-सब क्रान्तिकारी विचारों के बन गये थे। स्कूल के प्रबन्धकर्ता कहा करते, इन सब पर मोहन डे ने जादू कर दिया है। यह काली चाय नहीं काले जादू का असर है।...मोहन डे ने फिर काम की खोज की, लेकिन उन्हें कहीं भी

काम न मिला। वह नौजवान थे, बुद्धिमान थे, पढ़े-लिखे थे, वह मेहनत-मज़दूरी का काम भी कर सकते थे, लेकिन उन्हें कोई भी काम न मिला। लोग उनसे प्यार करते, उन्हें चाय पिलाते अपने घर ले जाते, अधिक रात तक उनके साथ घूमते, लेकिन उन्हें काम न मिला। वह रोज़ रात को हमारे घर आते, जब सब सो चुके होते। मुझ पर एक ऐसी दशा छा जाती, जिसे साधारणतः उन्माद भी समझा जा सकता है। मैं अपने हाथ से चाय बनाती और उन्हें पिलाती। और बार बार कहती, 'मोहन डे साहब, निराश न होइए, आपको काम ज़रूर मिल जायगा।' और मैं उनके धूल से अटे हुए बिखरे बालों को संवारती। वह हंसकर कहते, 'निराशा !...काम मिल जाय, तो भी परिणाम यही होगा!' मैं अनजान बनकर कहती, 'वह क्यों।' 'सुना नहीं तुमने प्रबंधकों का कहना है कि स्कूल में तो स्कूल के डिसिपलिन के अन्दर रहना होगा। और ऐसा सम्भव है।' मैंने कहा—नहीं। वह बोले यह तो होगा ही—बिज़निस इज़ बिज़निस।

'—ऐसे ही जैसे लाईफ़ इज़ लाईफ़' मैं ने कहा, और जीवन व्यापार से अधिक सुन्दर है। और आप जानते हैं कि मुझे सुन्दर चीज़ों से अधिक प्यार है। और उन्होंने कहा, यह नहीं चलेगा। वह चाहते थे कि मेरी निजी और सामाजिक ज़िन्दगी में परस्पर विरोधी सिद्धांत हों। और यह मुझे स्वीकार नहीं।

आशालता कहती गयी—'मैं कभी उनसे पूछती, काम मिला, तो वह कहते, हमेशा काम का ज़िक्र मत किया करो, विशेषकर जब तुम मुझे चाय पिलाती हो। काम के ज़िक्र से ही सारे दिन की थकान फिर वापस आ जाती है। यह पलायन है, लेकिन दिन भर की थकान के बाद कुछ क्षणों के पलायन पर मुझे कोई आपत्ति नहीं।' और फिर अचानक कहने लगे—'देखो, मेरी लेखनी में शक्ति है। आज मैंने एक

कविता लिखी है, बहुत सुन्दर है। शायद इससे कुछ पैसे मिल जायँ।' यह कह कर वह चले गये।

दूसरे दिन मैं चाय लेकर नीचे उतर रही थी कि अम्मी की आंख खुल गई और वह चिल्ला पड़ीं। मैं घबरा गयी और ठोकर खा कर गिर पड़ी और टूटी हुई प्याली का एक टुकड़ा मेरे माथे में आ लगा। आप देख रहे हैं ना! यह निशान उसी घाव का है। मां चिल्ला रही थीं, चाय, चाय! तुमने तो अपनी ज़िन्दगी को एक रोग लगा लिया है। और वह भी यह निगोड़ा काली चाय। मालूम नहीं, क्या हो गया तुम्हें! और मुझे चारपाई पर ले जा लिटा दिया। दूसरे दिन मैं रात को फिर नीचे गयी और दीवार पर देखा। इस दीवार पर मोहन डे अपनी मुलाकातों की गिनती लकीरें डाल कर करते थे। मैंने लकीरें गिनीं, वह कल नहीं आये थे। वह उससे पहले दिन भी नहीं आये थे।

मैं सोचने लगी क्या उन्हें कहीं काम मिल गया। उनकी तबीअत कई दिनों से खराब थी। उनके पास इलाज के लिये पैसे नहीं, खाने के पैसे नहीं, शायद वह कई दिनों से भूखे होंगे। मैं व्यथित हो उठी। दूसरे दिन सुबह उठकर मैं मोहन डे को खोजने निकल पड़ी। मैं अपने मित्रों के पास गयी, किसी ने कुछ भी नहीं बताया। सब मौन थे। मेरे हृदय में भय की एक लहर उठी। 'तुम चुप क्यों हो? मोहन डे कहां हैं।' मैंने पूछा।

'—वह अपने घर वापस चला गया।'—एक मित्र ने कहा।

'—यह कैसे हो सकता है, उन्होंने किसी को बताया नहीं, मुझे भी नहीं।'

'उन्हें अचानक जाना पड़ गया।'

'—कब आयेंगे ?'

कोई जवाब न मिला तो मेरे धैर्य की सीमा न रही। —'तुम चुप क्यों हो ? मोहन कब आयेंगे ?'

'—अब मोहन डे नहीं आयेंगे ! उनके शरीर की कोई नली फट गयी थी, अधिक रक्त बहने से अस्पताल में...।' वह मौन हो गया।

'—मोहन डे !' मैं चीख उठी। मित्रों ने बताया कि डाक्टर का कहना था कि बीमारी की दशा में भूखे पेट लगातार तेज़ चाय पीने से उनका शरीर जर्जर हो गया था।

मैंने देखा, आशालता सिसकियां लेने लगी। ज़रा देर बाद वह फिर बोली—'मिस्टर माथुर, और लोग कहते हैं कि वह अधिक शराब पीने से मर गया है।'

फिर हल्के २ खांसने लगी। उसकी खाँसी रुकने में न आती थी। मैंने उसकी खांसी कई बार सुनी थी लेकिन इस तरह निरन्तर कभी नहीं सुनी थी।

'—आशालता, तुम्हें कोई तकलीफ है ?'—मैंने पूछा।

उसने मेरी ओर देखा। मेरे कानों में इसकी खांसी की आवाज़ अब आ रही थी...

'—रेनु, तुम्हें क्या हो गया है ?' मेरे सामने बैठी रेनु खांस रही थी।

रेनु का चेहरा लाल हो रहा था। किसी तरह अपने को सँभाल कर, आंखों को पोंछती वह बोली—'कुछ नहीं, आज एक बड़ी

आवश्यक मीटिंग है। मुझे इजाज़त दें।'

'—क्या आशालता से मुलाकात हो सकती है?' मैंने रेनु से कहा। मैं सोच रहा था कि शायद उससे क्षय रोग के होते हुये भी जीवित रहने का कोई रहस्य मालूम हो सके, सम्भवतः उसे कोई ब्लैक मैजिक आता हो।

कोई भी एक आदमी

मैं अपने मस्तिष्क में दुनिया के बड़े २ आदमियों के बारे में सोच रहा था कि १९५४ में दुनिया का सब से बड़ा आदमी कौन है। मेरे मस्तिष्क में चलचित्र की तरह हर देश के बड़े २ आदमी अपना परिचय पत्र लिए एकत्रित हो रहे थे कि दरवाज़े पर दस्तक हुई। सब बड़े आदमी आपस में गडमड हो गये और मैं दरवाज़े की ओर लपका।

'—कौन है ?' मैंने पूछा।

'—एक आदमी।' उत्तर मिला।

'—कौन आदमी ?' मैंने फिर पूछा।

'—कोई भी एक आदमी।' अपरिचित ने उसी ठहराव और तटस्थता के स्वर में उत्तर दिया।

मैंने आवाज़ पहचानने की कोशिश की लेकिन असफल रहा। इतनी रात गये दरवाज़े पर दस्तक देने वाला आदमी कोई अपरिचित या पराया तो नहीं हो सकता और फिर इतनी निडरता से उत्तर देने वाला अपने मित्रों के अतिरिक्त और कौन हो सकता है। मैंने दरवाज़ा खोल दिया मेरे सामने एक दुबला पतला व्यक्ति खड़ा था। वह एक क्षण के लिए मौन रहा।

'—मुझे आपसे आवश्यक काम है। क्या मैं भीतर आ सकता

हूं ?'—उसने नम्रता से कहा। और मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही भीतर आ गया। उसने दरवाज़े की चटखनी लगा दी। मुझे पहली बार भय का अनुभव हुआ। मालूम नहीं इस आदमी के क्या इरादे हैं। क्या इसका इरादा डकैती तो नहीं या वह मुझे कत्ल करना चाहता है। आखिर वह कौन है ? क्या चाहता है ? इतनी रात गये एक अपरिचित के घर क्यों आया है। लेकिन उसने मुझे सोचने का अवकाश नहीं दिया और सीधा मेरे स्टडी रूम में घुस आया। मेरे और उसके बीच अन्तर इतना कम था और कुछ इस तरह था कि यह ध्यान ही न रहा कि मैं उसके पीछे जा रहा हूं या वह मेरे पीछे आ रहा है। स्टडी रूम में आकर वह रुक गया। रोशनी में मैंने उसके चेहरे पर भयभीत दृष्टि से देखा। वह हलके रङ्ग की भूरी पतलून और खुले कालर वाला कमीज़ पहने हुये था। उसके पांव में चप्पल थे और बटन खुली कमीज़ के पीछे उसकी छाती पर काले बाल अत्यन्त डराओने मालूम होते थे। उसके सिर के बाल बिना कंघी के बिखरे हुये थे। उसके चेहरे पर कठोरता का आकार था। उसकी डाढ़ी के बाल बढ़े हुये थे। वह एक ही समय में अपराधी भी दिखाई देता था और निर्दोष भी। ऐसा मालूम होता था कि वह कई दिनों से सोया नहीं था। उसकी आंखों से एक विचित्र सी कोमलता, आतंक और बेकरारी टपकती थी। जब वह कुछ क्षणों तक बिलकुल मौन रहा और मैं आश्चर्य और भय से परेशान हो गया तो मैंने घबरा कर पूछा, 'तुम कौन हो ?'

'—एक आदमी।'—उसने वैसे ही स्थिर स्वर में बेरुखा सा उत्तर दिया और मैं यह पूछने का साहस न कर सका। कौन आदमी ?

क्योंकि शायद इसका उत्तर भी वही होगा—'कोई भी एक आदमी।'

'—क्या लेने आये हो तुम यहां इतनी रात गये ?' मैंने घबराहट में साहस शामिल करते हुये कहा।

'—पैसे !' उसने बिना किसी हरकत के कहा।

'—पैसे कैसे ?'

'—दस पन्द्रह बीस रुपये।'—उसने कहा।

'—तुम चोर हो ! बदमाश!'—मैंने चिल्लाते हुये कहा।

वह बिल्कुल मौन रहा। वह न हिला न जुला।

'—निकल जाओ यहां से वरना मैं शोर मचा दूंगा।' उसकी निस्तब्धता मानो एक विचित्र सा भय बनकर मुझे ग्रसने लगी। मेरे इस वाक्य से उसके हाथों में मानो एक गति दौड़ आयी। उसकी मुट्ठियां भिंच गईं और ऐसा मालूम हुआ कि वह दांत भी पीस रहा था। वह आगे बढ़ा।

'—रुक जाओ वरना...... ।'

मैं अभी वाक्य पूरा भी न करने पाया था कि उसने दोनों हाथ मेरी गरदन की ओर बढ़ाये।

'—मैं तुम्हारा गला घोंट दूंगा।' उसने शायद यही कहा था और वह वास्तव में मेरे इतने निकट आ गया कि मैं भय से कांपने लगा। मैं पीछे हटा। मैं मेज़ से टकराया और आराम कुर्सी पर गिर पड़ा।

'—मेरे पास पैसे नहीं।'—मेरी आवाज़ में अब भय के साथ २ प्रार्थना भी थी।

वह कुछ न बोला और मेरे शरीर पर झुक गया । मैंने उसकी ओर भयभीत दृष्टि से देखा और मुझे अपनी गरदन पर उसके हाथों की उङ्गलियां महसूस होने लगीं। मुझे उस आदमी के रूप में यमराज दिखाई देने लगा। मैं भय से कांप रहा था और मुझ में इतना साहस न था कि मैं शोर मचा दूं। और न ही उस पर शारीरिक आक्रमण कर सकने की शक्ति थी। यद्यपि उसके हाथ में न पिस्तोल थी और न ही कोई छुरा। लेकिन उसके हाथों में मृत्यु बन्द थी जो किसी क्षण मुझ पर झपट सकती थी। जब मेरे सामने कोई रास्ता न रहा तो मैंने अपनी जेब में हाथ डाला और जितने पैसे निकले उसके सामने रख दिए। यही कोई दस बारह रुपये थे। उसने अपने हाथ फैलाए। उसके हाथ कांप रहे थे। मैंने उसकी ओर देखा। उसका सारा शरीर कांप रहा था। जैसे उसकी गरदन मेरे हाथों में हो। मुझे एक क्षण के लिए ऐसा महसूस हुआ कि वह बहुत दुर्बल आदमी है, अत्यन्त दुर्बल ! इसके पहले कि मैं साहस करके इस दुर्बलता की दशा में उस पर झपटता उसने पैसे-अपनी मुट्ठी में बन्द किए और मेरी ओर देखा। उसकी आंखों में कोमलता अब भी थी। बेकरारी अब भी थी। लेकिन मालूम नहीं भय कहां लुप्त हो गया था। वह जैसे अब न निर्दोष था न अपराधी। बस केवल एक आदमी था। लेकिन कौन ?

वह दरवाज़े की ओर लपका। जैसे पराजित सैनिक युद्ध क्षेत्र से भागता है। मुझे चिटखनी खोलने की आवाज़ आई और फिर बरामदे में किसी के दौड़ने की। मैं कुछ क्षण आराम कुर्सी पर निस्तब्ध पड़ा रहा और इस दुर्घटना के बाद अपने श्वास जमा करने लगा।

थोड़ी देर पश्चात मैं दरवाज़े के निकट गया और डरते डरते

बाहर झांका जैसे वह अब भी किसी दीवार के पीछे छिप कर खड़ा है। और किसी भी क्षण उसके हाथ मुझे मृत्यु की गोद में फैंक सकते हैं। बरामदे में अन्धेरा था और सड़क पर बिजली का प्रकाश था और दूर दूर तक आदमी की छाया भी नज़र न आती थी। मैंने बरामदे में रौशनी की। लेकिन वहां कोई मौजूद न था। केवल एक छिपकिली थी जो इस अन्धेरे में अब भी किसी शिकार की तलाश में थी। मैंने रौशनी बुझा दी और दरवाज़ा बन्द करके अपने स्टडी रूम में आ गया। मेरे मस्तिष्क से उस आदमी का चेहरा अभी तक नहीं उतरा था। दस बारह रुपया की कोई ऐसी बड़ी बात नहीं थी। लेकिन आश्चर्य तो यह था कि जो आदमी अभी अभी आया था। उसने घड़ी नहीं छीनी। सोने की अंगूठी नहीं उतारी। मुझ से सौ हज़ार रुपये नहीं मांगे। केवल दस पन्द्रह बीस रुपये जो उसके लिए बहुत बड़ा खज़ाना था। लेकिन इससे भी अधिक आश्चर्य की बात तो यह थी कि वह इन रुपयों के लिए मेरा गला घोंट देने के लिये तैयार था। शायद वह मुझे धमका रहा था। नहीं, उसका इरादा वास्तव में ही खतरनाक था। वरना वह मेरे इतना निकट न आता। और वह इतनी रात बीते यहां क्यों आया? लेकिन पैसे लेते समय वह कांप क्यों रहा था। मेरे मस्तिष्क में विचित्र उलझन थी। लेकिन मुझे ऐसी आशंका क्यों हो रही थी कि वह एक बार फिर आएगा। वैसे तो दुबारा आने का तो कोई कारण न था उलटे अब तो वह मुझ से दूर भागने की कोशिश करेगा। मैं एक दो घण्टे तक बैठा यही सोचता रहा और फिर ध्यान आया कि मुझे १९५४ में दुनिया के सबसे बड़े आदमी पर लेख लिखना है। मैंने अपने मस्तिष्क पर ज़ोर दिया और फिर बिना सोचे समझे लिखना शुरु कर दिया।

१९५४ में दुनिया का सबसे बड़ा आदमी—

अभी मैं वाक्य पूरा भी नहीं करने पाया था कि दरवाज़े पर दस्तक हुई। मेरे शरीर में फिर कपकपी सी दौड़ गयी। मैंने भयभीत स्वर में पूछा, 'कौन है ?'

बाहर से कोई उत्तर न आया।

'कौन है ?' मैंने फिर ज़ोर से पूछा।

उत्तर फिर भी न मिला।—दरवाज़े के बाहर खामोशी थी। लेकिन मैंने महसूस किया कि यह वही आदमी है। अबके उसका इरादा अवश्य ही खतरनाक होगा। उसे मेरी कायरता का ज्ञान हो गया है और वह उससे लाभ उठाना चाहता है। वह मुझे निश्चय ही कत्ल कर देगा। वह मेरी घड़ी और मेरी अंगूठी छीन के ले जाएगा। मैंने बेतहाशा शोर मचाना शुरु कर दिया। मेरा ख्याल था कि मेरे शोर मचाने से वह आदमी लोगों के डर से भाग जाएगा। लेकिन बरामदे में किसी की पदचाप सुनाई न दी। थोड़ी देर बाद बीसियों आदमियों के शोर और दौड़ने की आवाज़ें आईं। आवाज़ कमरे के निकट आती गई। मैंने एकदम दरवाज़ा खोल दिया और स्वयं दरवाज़े के पीछे हो गया। लेकिन कोई भीतर न आया। मैंने दरवाज़े के पीछे से झांक कर देखा। मेरे सामने वही आदमी खड़ा था। स्तब्ध और मौन उसके चेहरे पर वेदना थी और उसके गिर्द बीसियों आदमियों का घेरा था। कोई उसे टांगों से घसीट रहा था और कोई उसे बाहों से पकड़ रहा था। किन्तु वह अपने को बचाने के लिए बिल्कुल भी इच्छुक नहीं जान पड़ता था। वह उसी तरह मूर्ति की भान्ति निस्तब्ध और मौन खड़ा रहा। उसकी आंखों में अब दूसरी मुद्रा बेकरारी भी लुप्त थी। अब न आतंक था न बेकरारी। केवल कोमलता थी। ऐसी कोमलता जो गहरी वेदना

से जन्म लेती है। उसने अपनी दोनों बाहों में सफेद वस्त्र से लिपटी हुई कोई वस्तु उठा रखी थी। उसकी एक मुट्ठी बन्द थी। उसने लोगों की ओर कोई ध्यान न दिया और मेरी ओर देखता रहा। वह कुछ क्षण इसी तरह देखता रहा और फिर अपनी मुट्ठी खोल दी। उसके हाथ में वही नोट थे जो वह मुझ से छीन के ले गया था। मैं एक असीम आश्चर्य से उसकी ओर देखता रहा। वह वापस मुड़ने लगा लेकिन लोगों का घेरा उसके गिर्द तंग होता गया। किसी ने उसके चेहरे पर अपने हाथों की भरपूर शक्ति से तमाचा मारा—चोर! बदमाश!—इस चोट से वह लड़खड़ाया। उसकी बाहों में रखी हुई वस्तु नीचे गिरते बची। उसने अपनी पूरी शक्ति से उसे सम्भाला और छाती से लगा लिया।

'क्या है यह?'—किसी ने उस से छीनने की कोशिश की। और इस छीना झपटी में सफेद वस्त्र एक ओर से फट गया।

—मेरे मुंह से हल्की चीख निकली। उसकी बाहों में उसकी छाती से लिपटा एक बच्चे का शव था मेरे सामने जैसे सब रौशनियां एकदम बुझ गई हों और जैसे सब रौशनियां एक दम जल गई हों। लोग उसे घसीट कर बरामदे से बाहर ले गये। मुझे मालूम नहीं इसके बाद क्या हुआ। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उसने मेरी गरदन पर नहीं मेरी आत्मा पर अपनी उङ्गलियां रख दी हैं। मैं अपने स्टडी रूम में वापस आ गया। मेरे सामने बीसियों दैनिक पत्रों और पत्रिकाओं के तराशे बिखरे पड़े थे और उन पर दुनियां के बड़े बड़े आदमियों की जीवनियां और चित्र थे। और सब से ऊपर खाली काग़ज़ पड़ा था जिस पर कुछ क्षण पहले मैंने लिखा था, '१९५४ में दुनिया का सबसे बड़ा

आदमी—। और इसके बाद कागज़ बिल्कुल खाली था। और सारे कागज़ पर एक चित्र उभर रहा था। उस आदमी का जो केवल एक आदमी था। कोई भी एक आदमी। उसने मुझे यही बतलाया था और उसके सम्बन्ध में मैं केवल यही जानता था।

मारग्रेट

'—मारजी।'—गली के मोड़ पर अचानक मारग्रेट को देखकर आनन्द ने उसे आवाज़ दी।

'—मारग्रेट।'—उसने दोबारा पुकारा।

मारग्रेट ने चौंक कर देखा जैसे आत्मविस्मृति की दशा में किसी ने उसे पुकारा हो। उसने आनन्द की ओर एक क्षण के लिये देखा, वह ठिठकी, एक कदम आगे बढ़ी और फिर रुक गई।

'—मारजी डीयर।'

'—आनन्द।'—मारग्रेट के होंट एक क्षण के लिये हिले, उस के सफेद दांत नज़र आए और फिर जैसे सब कुछ भूल गई हो। उस ने आनन्द की तरफ़ देखा जैसे किसी छाया को देख रही हो।

'...क्या बात है मारजी? तुम इतनी खोई खोई-सी क्यों हो?' आनन्द ने उसका हाथ दबाते हुए कहा।

'—कुछ नहीं, ऐसे ही।' मारग्रेट बोली। वह कुछ क्षण आनन्द के चेहरे को विस्मित दृष्टि से देखती रही।

'आओ कहीं बैठें। कुछ बात करें।'—आनन्द ने कहा। वे दोनों 'सीरोज़' में दाखिल हुए। आनन्द ने चाय का आर्डर दिया और मेज़ पर कोहनियों के बल झुक गया। '—मारजी। ऐसा मालूम होता है, तुम मुझ से नाराज़ हो।'

'—नहीं तो।' शायद तुम अपने काम में अधिक व्यस्त थे। सोचा जब तुम्हें फुरसत होगी तो लिखोगे।'—मारग्रेट ने बर्फ जैसे जमे हुए शब्दों में कहा।

'—क्या तुम्हें मेरा कोई पत्र नहीं मिला ?' आनन्द ने आश्चर्य प्रकट किया।

'—इसे भी कोई टेलीपेथी समझ रखा है।'—मारग्रेट के चेहरे पर हल्का सा कम्पन हुआ।

'मैंने तुम्हें एक, दो कई पत्र लिखे। लेकिन तुम्हारा जवाब न पा कर चिन्ता हुई। इस लिये चला आया।'—आनन्द ने कहा।

'—शायद पुराने पते पर लिखे होंगे।'

'...हां।'

'—मैंने वह जगह छोड़ दी है।'

'—क्यों ?' मारग्रेट ने आनन्द की ओर व्याकुल दृष्टि से देखा और फिर चाय की तरफ़ देखने लगी।

'—मैं तुम्हें बहुत दिनों तक पत्र न लिख सका। शायद तुम।' —आनन्द ने मारग्रेट का हाथ अपने दोनों हाथों में ले लिया। मारग्रेट का हाथ निश्चल, निष्प्राण उसके हाथों में था।

'—ओह मुझे देर हो गई है आनन्द! चार बजे ड्यूटी पर हाज़िर होना है।'—मारग्रेट ने रिस्टवाच देखते हुए कहा। '—रात को मिल सकती हूँ...दस बजे!'

'—कहां ?'

'—न्यु लाइफ़ मैटर्नेटी एण्ड नर्सिंग होम के गेट पर।'

'—स्टैनले रोड ?'

'—हां।'

'—मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा।'

मारग्रेट ने कोई उत्तर न दिया। और वह चाय की प्याली आधी छोड़ कर चली गई। आनन्द दूर तक उसके काले पांव में सफेद सैंडल की हरकत देखता रहा। उसने रूखे काले बाल बड़ी लापरवाही से गिरह लगा कर पीछे बांधे हुए थे, काले रेशम की तारों के गुच्छे की तरह। मारग्रेट दूर होती होती एक बिन्दु बन गई और गायब हो गई। आनन्द ने सिग्रेट का एक लम्बा कश लिया और सोचने लगा कि मारग्रेट को क्या हो गया है? मौन, गम्भीर, उदास मारग्रेट जैसे कोई बर्फीली वायु छू गई है। शोख, चंचल, मुस्कराती, गाती, नाचती और हर दुख में जिद्दी स्त्री की तरह सिर झटका देने वाली मारग्रेट जैसे अपने सफेद वस्त्रों में बर्फ का चोगा ओढ़ कर सुन्न हो गई है। आनन्द ने घड़ी देखी। चार बजकर पांच मिनट थे और मारग्रेट दस बजे आएगी। और अभी उसे पांच मिनट कम छः घण्टे उसकी प्रतीक्षा में सड़कों पर काटने हैं।

दस बजने में अभी दस मिनट थे। आनन्द स्टैनले रोड पर स्थित न्यु लाइफ एण्ड मैटर्नटी और नर्सिंग होम के सामने लेम्प पोस्ट के नीचे खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था। उसके मस्तिष्क में मारग्रेट से अपनी पहली मुलाकात की रेखाएं उभर रहीं थी। होले होले जैसे बन्द कली अपना मुंह खोलती है, मुस्कराती है और चटक कर फूल बन जाती है। वह सैर करते करते बहुत दूर निकल गया था। वह क्रिश्चियन सिमिट्री की दीवार के साए में धीरे धीरे चल रहा था। सिमिट्री में पूर्ण सन्नाटा

था और धरती की छाती से सफेद क्रास इस तरह उभर रहे थे जैसे सफेद कफन ओढ़े आदमी की नन्हीं मुन्हीं रूहें कबरों से निकल रही हैं। कबरों के बीच घूमते हुए उसे अपने एकाकीपन का गहरा अनुभव हुआ। उसे इच्छा हुई कि कोई अनुभवी व्यक्ति उसे इस बेकरारी की दशा में मिल जाये और उससे लिपट जाये। अचानक उसे अपने निकट ही से हौले हौले सिसकियों की आवाज़ सुनाई दी। वह पहले तनिक डरा और फिर सम्भल कर उसी तरफ चल पड़ा। दाईं ओर एक कब्र पर एक युवती अपने घुटनों पर बैठी रो रही थी। उसके हाथों में ताज़ा फूल थे। उसके बाल उसके चेहरे पर बिखरे हुए थे और पेड़ के पत्ते हिलने से चांद की किरणें उसके शरीर पर रौशनी और अन्धेरे का तिलिस्म बुन रही थीं। वह उसके निकट जा कर खड़ा हो गया। सहसा उसने अपना हाथ उसके सिर पर रख दिया। लड़की एक क्षण के लिये कांपी और भयभीत दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी।

'तुम्हें क्या दुःख है?'—उसने स्नेह से उसकी पीठ पर हाथ रखते हुए कहा। लड़की ने उसकी ओर देखा और वह उसके हाथों का प्यार भरा स्पर्श अपने शरीर पर महसूस करके हिचकियां लेने लगी। उसने चांद की रौशनी में कब्र के कुत्बे की लिखावट पढ़ने की कोशिश की मगर असफल रहा।

'—यह किसकी कब्र है?'—उसने लड़की से पूछा।

'—मेरी मां की।'

'—लेकिन इतनी रात गए तुम यहां कैसे?'

लड़की मौन रही। '—इस में मेरा बच्चा भी दफ़न है।' थोड़ा रुकने के बाद वह बोली।

'—तुम बहुत दुखी हो।'—उसे इस लड़की के दुख का अनुभव अपनी रगों में तैरते हुए महसूस हुआ।

'—तुम्हारा पति ?'

'—मेरा कोई पति नहीं।'

'—क्या वह।'—वह रुक गया। उसने सोचा शायद उसका पति भी इसी कब्र में सोया हुआ है।

'—मेरा शादी नहीं हुई।'—लड़की ने उसके प्रश्न का उत्तर दिया।

'—लेकिन।' वह बिल्कुल उलझ गया।

लड़की ने उसकी दुविधा भांप ली। वह बोली। '—एक दिन मैं अपनी मां की कब्र पर फूल चढ़ाने आई तो यह बच्चा पड़ा हुआ मिला। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे स्वयं ईसा मसीह ने यह बच्चा मेरे लिये भेजा हो। मैं इस बच्चे को अपने साथ ले आई। लोगों ने मुझे शक की नज़र से देखा। मुझ पर लांछन लगाए। जैसे इस बच्चे ने मेरे स्तन से जन्म लिया हो। जिसकी शादी न हुई थी और जिस के बाप का पता न था।'—वह एक क्षण के लिये रुकी। 'मेरे बच्चे को बुरी नज़र खा गई। खुदा ने मेरी दुआयें न सुनीं और दूसरों की बद्दुआएं कबूल कर लीं।'—वे दोनों हाथों से अपना चेहरा छिपा कर कब्र पर झुक गई।

'—बच्चे को क्या हुआ था ?' उसने पूछा।

'—अचानक बीमार हो गया था।'

उसने लड़की की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा—'मुझे नौकरी

से अलग कर दिया गया था। क्योंकि मैं एक नाजायज़ बच्चे की मां समझी जाती थी। मैं हर बीमारी का इलाज जानती हूं। लेकिन उस का इलाज न कर सकी और वह मुझ से रूठ कर हमेशा के लिये जुदा हो गया। उसने सोचा कि मैं उसकी मां की जगह नहीं ले सकती। लड़की ने क्रास पर अपना सिर रख लिया।

'—खुदा मुझे यहां मौत बख्श दे।'—उसने अपनी छाती पर क्रास का चिन्ह बनाया और खामोश हो गयी। उसे जब कुछ न सूझा तो उसने लड़की का नाम पूछा।—'मारग्रेट।'—लड़की ने उत्तर दिया। उसने मारग्रेट को बाहों का सहारा दे कर उठाया और उसे धीरे २ सिमिट्री से बाहर ले आया।

'—मैं तुम्हें घर पहुँचा सकता हूं।'—और वह उसे घर तक ले आया। दरवाज़े की दहलीज़ पर मारग्रेट ने उसकी ओर अत्यन्त व्यथा और कृतज्ञता से देखा और अन्दर चली गयी।

मारग्रेट के प्रति उसका भाव करुणामय था। मारग्रेट का आकर्षण था कि उसने मारग्रेट को अपने रक्तों में महसूस किया। एक दिन मारग्रेट ने उससे कहा—'अगर हम शादी कर लें।'

'—शादी!'—वह इस प्रस्ताव के लिये तैयार न था। उसने सोचा कि उसे मारग्रेट के मां बाप का कोई पता नहीं। मारग्रेट निर्धन है, ईसाई है। वह कभी नर्स थी और अब एक झूलती हुई नैतिकता के सहारे जीवन के रिश्ते बनाती-बिगाड़ती रहती है। लेकिन मारग्रेट के सामने जैसे उसके शरीर और हृदय का अन्तर कम होते २ मिट जाता है और समय-स्थान से बेखबर उसमें सिमट जाता है।

उसे यह डर था कि वह इस अवस्था में आत्म समर्पण न करदे। इसलिए वह मारग्रेट से दूर हो जाना चाहता था। वह दूसरे शहर चला गया। लेकिन वहां उसे धीरे २ मारग्रेट की जज्बाती पाकीज़गी सताने लगी। उसने कई बार अपनी कल्पना में मारग्रेट को अपना बच्चा लिये हुये देखा। इसी कल्पना में ही वह बच्चे को लेने के लिये हाथ बढ़ाता है। मारग्रेट एकदम बच्चे सहित गायब हो जाती है। इस काल्पनिक आंख-मचौली ने उसके दिल में मारग्रेट की याद और उसकी अन्तर-आत्मा की चुभन को तेज़ कर दिया। और इसी चुभन से बचने के लिये वह मारग्रेट को मिलने वापिस आया। ताकि वह मारग्रेट को पाकर आत्म समर्पण कर दे। और उसके बच्चे को अपना कर अपने हृदय में चुभन से मुक्त हो जाये। इन विचारों ने मारग्रेट की प्रतीक्षा की बेचैनी को और बढ़ा दिया। अचानक उसे किसी के मैकेनिकल कदमों की आवाज़ आई। उसने पीछे मुड़ कर देखा, मारग्रेट थी।

'—बहुत इन्तज़ार कराया तुमने।'—आनन्द ने कहा।

'—पांच मिनट ही तो देर से आई हूँ। आखिर आते आते भी तो समय लगता है। कोई ख्याल थोड़े ही हूँ।'

'—ओह! तुम्हारा ख्याल तो मेरे करीब से गया ही नहीं।' आनन्द ने कहा और उसने महसूस किया कि मारग्रेट की उदासी कम हो रही है और उसकी चंचलता वापिस लौट आने की राह तलाश कर रही है।

'—कहां चलोगे?'—मारग्रेट ने पूछा।

'—जहां तुम से पहली मुलाकात हुई थी।'

वह एक दूसरे का हाथ पकड़े स्टेनले रोड पर बिजली के खम्भों से ज़रा हट कर पेड़ों की छाया में धीरे २ चलने लगे। उनके मस्तिष्क में कई विचार, कई यादें कितने प्यार भरे क्षण उभर रहे थे। लेकिन वह खामोशी से चलते रहे और अपने हाथों के स्पर्श से एक दूसरे में अपने भावानुभावों को सींचते रहे। वह देर तक सड़कों पर इसी तरह खामोश घूमते रहे। जब वह सिमिट्री पहुँचे तो चांद अभी निकल रहा था। और सिमिट्री में पूर्ण निस्तब्धता थी। वह उस यादगार कब्र के नज़दीक बैठ गये।

'—तुम्हारे जाने के एक डेढ़ महीने बाद मुझे काम मिल गया था लेकिन कुछ दिनों बाद ही छोड़ना पड़ा।'—मारग्रेट ने कहा।

'—क्यों ?'

'—अपनी लापरवाही के कारण।'

'—लेकिन मारजी तुम तो सब नर्सों से ज्यादा स्मार्ट समझी जाती थीं !'

'—हां मगर मेरे हाथों से एक के बाद दूसरा, दो केस खराब हो गए। एक में मां बच न सकी और दूसरे में बच्चा... ।'

'—ताज्जुब है, तुम्हारे हाथों से भी केस खराब हो सकता है ? तुम तो केस को इस तरह हाथ में लेती हो जैसे स्वयं बच्चे को जन्म दे रही हो।'

मारग्रेट ने आनन्द की ओर देखा। उसकी आंखों। में आंतक की लहर दौड़ गयी।

'—दूसरे केस में मुझे ऐसा मालूम हुआ जैसे कि बच्चा जायज़

नहीं।'—वह पल भर को रुकी।—'मिसिज़ चन्द्रावती को जानते हो? उसका बच्चा था।'

'—लेकिन बच्चा तो उसके पति का ही था।' आनन्द ने कहा।

—'हां, लेकिन वह एक ऐसी शादी से पैदा हुआ था जो चन्द्रावती की इच्छा के बिना ज़बरदस्ती की गई थी।'

'—मारजी, तुम कभी २ अजीब बातें सोचती हो। यद्यपि कानूनी तौर पर वह बच्चा जायज़ नहीं समझा जाता जो बिना शादी के पैदा हो।'

—'शादी!'—मारग्रेट ने अपने निचले होंट को दांत से काटा। 'केवल प्यार में हासिल किया हुआ बच्चा ही जायज़ होता है।'—मारग्रेट भावुकता हीन हो बोली।—'और प्यार के इलावा औरत और मर्द के तमाम रिश्ते ऐसे हैं जैसे आदमी स्वयं अपने हाथों से बीज हवा में बखेर कर ज़ाया कर दे या उस धरती में बो दे जिसे उसने खुद बंजर कर दिया।'

'—मारजी!'—उसके मन में सहसा यह प्रश्न कमल के फूल की तरह लहरा गया और उसको डस गया।

'—क्या हमारा बच्चा...।'

'—हमारा कोई बच्चा नहीं होगा।' मारग्रेट बोली।

'—क्यों?'

'—बीज जो प्यार में बोया गया था उस में प्यार करने वाले ने ज़हर भर दिया था।' मारग्रेट ने कहा। आनन्द के दिल में जैसे किसी ने नश्तर चिभो दिया। मारग्रेट ने बच्चे का जन्म नहीं

होने दिया। मारग्रेट जो बच्चे के लिये अपनी नौकरी और ज़िन्दगी दे सकती है वह चीज ज़ाया कर दे। आनन्द की आत्मा का कांटा तेज़ी से हरकत करने लगा।

'—मारजी ! मैं तुम्हारे शरीर और दिल तक पहुंच गया लेकिन आत्मा तक न पहुंच सका।' उसकी आंखों में वेदना थी, गलानि और शोक था। मारग्रेट ने उसकी ओर देखा और अपने होंटों को दबाया जैसे व्यथा का सब ज़हर उसने अपने होंटों से चूस लिया हो। मारग्रेट ने आनन्द की आंखों में शायद पहली बार आँसू देखे। वह अपना सिर घुटनों में देकर बैठ गई और आनन्द को ऐसे महसूस हुआ जैसे इस सिमिट्री की प्रत्येक कब्र पर एक पवित्र मरियम बैठी रो रही है और उस कब्र में उसकी रूह और उसका बच्चा दफन है और उसके ऊपर उसकी मुजरिम आत्मा क्रास के चिन्ह की तरह शर्म से सिर झुका मौन खड़ी रही।

शाम की परछाईं

जब काम की बोरियत ज़िन्दगी की बोरियत बन जाती है तो आदमी इन्सान बनते २ मशीन बन जाता है और फिर यह मशीन समय के साथ २ घिसती चली जाती है और दिल की घड़ियां आत्मा की आवाज़ से मुक्त हो कर शोर मचाती है और सहसा किसी क्षण झटके के साथ रुक जाता है। जिसे आम लोग मौत का नाम देते हैं।

जब काम की बोरियत से उसके मस्तिष्क में चिऊंटियां सी रेंगने लगती हों वह गीतों और कविताओं की पुस्तक उठा लेता और अपनी नीरस होती हुई ज़िन्दगी में कविता का सौन्दर्य भरने की चेष्टा करता। कभी २ यह कविता शहद से भरे होंठ की तरह उसके भावों को छू लेती और कभी किसी कठोर नश्तर की नोक से नये पुराने ज़ख्म कुरेद देती। लेकिन सांस की गति हर हाल में तेज़ होती जाती।

अपने मस्तिष्क में चिऊंटियां सी रेंगने की कैफियत महसूस करते हुये उसने कविता की किताब उठाई और कुर्सी पर अधलेटा सा पढ़ने लगा —

'मैं चाहता हूं कि सूखी घास पर लेट जाऊं
मेरा सिर उसके ज़ानों पर हो
और मैं बेहरकत लेटा रहूं
जब कि उसकी सांस का स्पर्श मेरे चेहरे पर महसूस हो

और सितारों की फ़सल ख़ामोशी से उग रही हो
मैं बे हरकत लेटा रहना चाहता हूं
लेकिन यह महसूस करते हुए कि उसका कोमल हाथ छिपे
चोरी मेरे चेहरे और सिर को छू रहा हो।
और मेरे दिल का दर्द धीरे धीरे ख़तम हो रहा हो'

वह बार २ यह कविता दोहराने लगा,—'सितारों की फ़सल ख़ामोशी से उग रही है.........उसका कोमल हाथ छिपे चोरी मेरे चेहरे और सिर को छू रहा है......और मेरे दिल का दर्द धीरे २ ख़तम हो रहा है।

उसके मस्तिष्क में डूबते हुए सूर्य की रौशनी में अन्धकार सा उमड़ने लगा। नीले आकाश की विशाल छत में एक कंपकंपी होने लगती है। वह बेहरकत लेटा हुआ है। उसके सिर पर सितारों की फ़सल ख़ामोशी से उग रही है। उसका कोमल हाथ छिपे चोरी उसके सिर को छू रहा है। टन...... मौत की घंटी की तरह घड़ी की आवाज़ से समस्त सितारे बुझ गये। साढ़े छः बजे उसे काम पर जाना है। तीन साल से निरंतर वह साढ़े छः बजे काम पर जाता है और साढ़े नौ बजे वापस आता है और फिर शाम को साढ़े छः बजे जाकर साढ़े नौ बजे लौट आता है। उसे चौबीस घंटों में केवल छः घंटे काम करना पड़ता है लेकिन उसे प्रतीत होता है कि उसकी ज़िन्दगी की शाह रग पर किसी ने अपने वहशी होंठ रख दिये हैं। उसकी ज़िन्दगी में वह हसरत बार बार उसके दिल की धड़कनों में दर्द पैदा कर देती है कि वह एक शाम काम की बेज़ार ज़िन्दगी से दूर सड़कों पर आज़ाद घूमे और देखे कि रौशनी और अन्धकार के मध्य सितारे जीवित रहने के लिए किस प्रकार टिमटिमाते हैं और क्षण प्रति क्षण दीप्तिमान होते जाते हैं। किस तरह

चांद दबे पांव किसी मकान की ओट से रौशनी के गोले की तरह प्रगट होता है। वह ऐसी ही एक शाम को खुले आकाश के नीचे हरी हरी घास पर बाहें फैला कर लेट-जाना चाहता है। वह ज़ोर २ से सांस लेता है और उसके चेहरे और सिर पर कोमल उंगलियों के स्पर्श से ज़िन्दगी की समूची थकान और पीड़ा के समस्त चिन्ह मिट जाते हैं। लेकिन तीन वर्ष से उसे कोई आज़ाद शाम प्राप्त न हो सकी। उसे अब दिन के सौन्दर्य की कोई कल्पना नहीं। सुबह क्या होती है, सूर्य के चेहरे से किस प्रकार रात्रि का काला आवरण धीरे-धीरे उठता है। शाम क्या होती है और सूर्यस्त के समय आकाश के विशाल कैनवस पर सूर्य की किरनें कैसे रंग बिखेरती है। उसे अब भी धुन्धली सी स्मृति है कि संध्या का विस्तृत अम्बर एक विशाल सागर की तरह नज़र आता है और बादल नावों की तरह तैरते हैं और उसके दूसरे किनारे पर शोलों के फूल से खिलते हैं। लेकिन शाम और सुबह से वंचित उसने दोपहर की जलती हुई रौशनी देखी है या रात की स्याही। और जब सुबह होती है या शाम आती है तो वह मंद प्रकाश के कमरों में कीट्स और शैली की रोमांस से भीजी कविताओं को दूध के चमचों की तरह प्रकाश-हीन मस्तिष्क में दाखिल करता है। जब कभी किसी कविता पर दिल की धड़कन तेज़ होती है और पीड़ा की अनुभूति बढ़ जाती है तो वह ऊंची आवाज़ से कोई दूसरी कविता पढ़ कर पेट में भेज देता है, जहां रोटी के एक ग्रास की तरह वह हज़म हो जाती है। दर्द खत्म हो जाता है और भूख सताने लगती है परन्तु एकाकीपन के उन उदास क्षणों में जब वह शाम को खोया खोया सा किसी विचार में उलझा होता है या जब दिन को आग उगलती सड़कों पर अकेला घूमता है तो एक शाम खुशी से जी लेने की तड़प

तीव्र हो जाती है। पेट की भूख ऊपर उठती है इतनी ऊपर कि दिल तक पहुँच जाती है, जहाँ दर्द दिल की ग़िज़ा बन जाता है और तेज़ हो जाता है।

जब तीन साल से उसे शाम प्राप्त न हो सकी तो शाम की कल्पना उस पर जनून की तरह छा गई। शाम होते ही वह उदास हो जाता, अकेला महसूस करता, अपने कमरे की एक एक वस्तु को हसरत भरी नज़र से देखता। डुबडुबाई हुई आंखों वाली स्त्री का चित्र—नन्हें मुन्हें चीनी बच्चों का चित्र—हाथ पांव जकड़े मनुष्य का विकृत रूप— वीनिस की टूटी हुई प्रतिमा—पुस्तकों का अम्बार—चिड़ियों का घोंसला...... और हवा में उड़ते हुये कैलन्डर की लाल काली तिथियां १९५२, १९५३ और यह नये साल का कैलन्डर। वह सिरहाने में सिर छिपा कर नीरस हो जाना चाहता है, लेकिन छत के प्रत्येक शहतीर से, फर्श से, दीवारों और खिड़कियों से शैल्फों और अल्मारियों से छोटे छोटे चेहरे बड़ी बड़ी पुस्तकें उठाये सिर निकालते हैं और सन्ध्या का सारा सौन्दर्य सिमट कर एक बिन्दु बनकर मस्तिष्क के किसी कोने में छिप जाता और वह क्लासरूम में प्रवेश करता है। जब वह घर वापस आता है तो उसे प्रतीत होता है कि रात हर बंद खिड़की से झांक कर कह रही है कि वह समय से पहले ही मर रहा है। उसे अपने कमरे की खिड़की और दरवाज़ों के लाल नीले परदों से कृत्रिम सन्ध्या का सृजन भी प्राप्त नहीं। या तो पूर्ण रूप से अन्धकार छा जाता या सूर्य की कोई किरण किसी दर्ज़ से रास्ता खोज फर्श पर सिसकने लगती है।

ऐसी ही किसी एक शाम वह टैगोर की एक कविता पढ़ रहा था :—

'लेकिन मैं कृतज्ञ हूं,

मेरा भाग्य विवश और बेबस मानव से सम्बन्धित है।
जो दुख सहते हैं और शक्ति का बोझ अपने कंधों पर संभालते हैं।
वह चेहरे छिपा कर अंधेरे में अपनी सिसकियों की आवाज़ दबा लेते हैं।
लेकिन उनके दर्द की हर धड़कन गहन निशा की शिराओं में प्रवेश कर चुकी है।
और अरमान एक महान खामोशी में जमा हो गया है
कल उनकी होगी
ऐ सूर्य, सुबह के फूलों में खिलते हुये ज़ख्मी दिलों पर रौशन हो!'

अचानक रौशनी बुझ गई। क्लासरूम में पूर्ण अन्धकार छा गया। बिजली फेल हो गई थी। लेकिन इस अन्धकार में उसके मुंह से निकले शब्द जुगनूं की तरह उड़ रहे थे।

'ऐ सूर्य, सुबह के फूलों में खिलते हुए ज़ख्मी दिलों पर रौशन हो!' उसके दिल में सुबह के फूल के खिलने की सी कैफ़ियत पैदा हो रही थी। सुबह की कोई किरण रात से छिप कर उसके दिल के ज़ख्म में फूलों का रंग भरने लगी। वह कुछ क्षण रौशनी आने की प्रतीक्षा करता रहा। लेकिन जब निरन्तर प्रतीक्षा के पश्चात भी प्रकाश न हुआ तो छुट्टी हो गई। छुट्टी और शाम। शाम के तसव्वुर में सितारे झिलमिल झिलमिल करने लगे। वह एक क्षण सोच न सका कि वह इस शाम को कैसे बिताये। अजमल खां रोड, कनाटप्लेस चांदनीचौक, इंडियागेट, या वीराने में खामोश लेट जाये। ज्यों ज्यों

वह सोचता जाता, उसकी उलझन और उदासी बढ़ती जाती। इस उलझन से छुटकारा पाने के लिए उसने साईकल उठाई और एक ओर चल पड़ा। हज़ारों आदमियों के समुद्र में वह एक बूंद की तरह बह रहा था। साफ़ शफ़्फ़ाफ़ सड़कें रंगीन वस्त्रों से निखर गई थीं। वातावरण में एक महक थी और शाम अलकाओं के मेघ पर झूम कर आई थी। चांद से चेहरे चमचम करते थे। दिल में हल्की हल्की लाली रंग भरती थी और मन्द प्रकाश में कोई रहस्य बुना जा रहा था। हवाओं में आंचल लहराते थे। आंखों में चिंगारियां लपकती थीं। अधरों पर मुस्कान निखरती थी। रैस्तोरां में, सौन्दर्य जैसे काफ़ी के हर प्याले से निकल एक तरुणी का रूप धारण कर रहा था। सरगोशियां जन्म लेतीं और धीरे से खामोशी में किसी रहस्य को खोल कर गुम हो जाती थी। इतने बड़े समूह में अकेले घूमते घूमते वह थक गया। वह बड़ी सड़क से निकल कर एक छोटी सड़क पर आ गया। तांगे वाले चिल्ला रहे थे। 'बाड़ा-बाड़ा अकेली सवारी।' वह अकेला था परन्तु बाड़े से उसका कोई सम्बन्ध न था। मोड़ पर एक वृद्ध भिकारी मांगते मांगते सो गया था और सोते सोते मांग रहा था। 'एक आना बाबू अन्धे लाचार को एक आना! परमात्मा तुम्हें चांद सी दुल्हन देगा, तुम्हें पास करेगा, बड़ा अफ़सर बनाएगे...!' एक आना दुल्हिन, सफलता और अफ़सरी ....। तांगों के अड्डे के पास चारा काटने की मशीन के पास दो अधनग्न शरीर पसीने से तर मशीन चला रहे थे। शां शां—हय्या हय्या, मशीन की आवाज़ और आदमी की आवाज़ में कोई अन्तर न था। बिजली का प्रकाश ज़र्द पड़ने लगा और दीवारों पर आदमियों की परछाइं लम्बी होती गई। शाम वही थी, स्थान वही था, लोग वही थे पर जैसे वह अजनबी था, वह इस स्थान, इस शाम और इन लोगों से परिचित न था। विचित्र

रो। यह दुनिया है। लोग कूड़े करकट की तरह सड़कों पर फैल जाते हैं। क्या इन्हें कोई काम नहीं, कोई गम नहीं? शाम फिर भी सुन्दर है और उसे मालूम नहीं यह शाम कैसे बीतती है। इस असमर्थता ने उसके हृदय पर बर्फ की शिला सी रख दी। उसकी नसों में रेत के कण से संचार करने लगे। उसके मस्तिष्क में चिऊंटियां सी रींगने लगी। मालूम नहीं उसके शरीर और दिल पर क्या बीत रही थी। बस दिल डूबने की और शरीर टूटने की कैफ़ियत थी।

वह सड़क के साथ वाली अन्धेरी गली मुड़ गया। उसे कुछ शान्ति मिली। उसने अपने आपको अपने कदमों के हवाले कर दिया। एक अन्धेरी गली से दूसरी अन्धेरी गली में। वह महसूस कर रहा था कि उसने अपने जीवन को मौत के जहाज़ में एक अनजानी यात्रा के लिये अर्पित कर दिया है और कोई ऐसा आनन्द नहीं जो उसे जीवन से जोड़ सके। काम रोटी और नींद और कभी सुहाने और कभी डरावने सपने। सहसा गली के मोड़ पर वह किसी आदमी से टकरा गया। उसके कदम रुक गये। जहाज़ और चट्टान। मौत का जहाज़ और ज़िन्दगी की चट्टान। उसने क्षमा मांगी, और एक बार फिर अपने आपको कदमों के हवाले करना चाहा लेकिन उस व्यक्ति ने उसकी बांह अपनी दृढ़ पकड़ में ले ली।

'कौन?' उसने तनिक भयभीत स्वर में पूछा।

'रमेश।' उस आदमी ने कहा। यह नाम उस आदमी का नहीं था बल्कि उसका अपना नाम था। अपना नाम सुन कर उसे खुशी हुई। यह हाथ उसके मित्र चन्द्र का था।

'आज शाम को कैसे घूम रहे हो।' चन्द्र ने पूछा।

'बिजली फेल होगई थी इस लिये छुट्टी हो गई।'

'कैसे गुज़री यह शाम।'

रमेश के दिल में दर्द की एक टीस उठी। उसके सामने अन्धेरे में चन्द्र की छोटी छोटी तेज़ आंखें चमक रही थी।

'गुज़र ही गई।'

'यह तुम कब से क्या खेल रहे हो।'

'तुम कहां से आ रहे हो।' उसने पूछा।

'वर्कशाप से। चलो ज़रा घर तक तो हो आयें, मुंह हाथ धो लें फिर ज़रा घूमने चलेंगे।' चन्द्र और वह दोनों चल पड़े। रमेश के हाथ में चन्द्र का खुर्दरा हाथ था। किसी के कोमल हाथों का स्पर्श नहीं था। परन्तु फिर भी उसे ढाढ़स सी मिल गयी। घर पहुंच कर चन्द्र ने हाथ मुंह धोया और तेल के धब्बों से भरे कपड़ों को बदला।

'दिन भर मशीनों के साथ सिर फोड़ने के बाद इन्सान भी मशीन बन जाता है!' चन्द्र ने कहा। 'तुम मज़े में हो रमेश, अपना लिटरेचर पढ़ने पढ़ाते हो। मशीनों की गढ़गड़ाहट तो नहीं सुननी पड़ती ना।'

'मैं भी एक मशीन हूँ।' रमेश ने कहा।

'कैसी मशीन?'

'ग्रामोफोन।' दोनों खिलखिला कर हंस पड़े और बाहर निकल आये। वह रिज रोड के बिजली के एक खम्भे के नीचे बैठ गये। दूर

तक बिजली के खम्भों में एक ज़र्द झालर लटक रही थी। बादलों के परों पर चांद धीरे विहार कर रहा था और कहीं कहीं सितारे झांक रहे थे। नीचे धरती कठोर थी और ऊपर आकाश कोमल पर्दे की तरह लटक रहा था। सामने अलाओ के गिर्द कुछ मज़दूर पेशा लोग घेरा डाले बैठे थे। उनके खाली रोड़े और झल्लियां एक ओर पड़ी हुई थी। एक दो अपनी झल्ली में बैठे थे। वह ज़ोर २ से बोल रहे थे। थोड़ी देर में वह हाथ में हाथ डाल कर अलाओ के गिर्द नाचने लगे।

'तुम कहते हो कि तुम मशीन हो, आजकल लोहे के आदमी भी बन रहें हैं।' चन्द्र ने कहा, 'मैं सोचता हूँ यदि मशीनों के हृदय, मस्तिष्क और आत्मा हो गई तो फिर क्या होगा।' रमेश खामोश था। आदमी जब काम करते २ थक कर अपने माथे का पसीना पोंछेगा तो सहसा कोई मशीन रुक जायगी और बोल उठेगी 'क्या अधिक थक गये हो।' चन्द्र ने कहा।

'शुक्र करो कि मशीनों के पेट और आत्मा नहीं वरना उसे भी माथे के पसीने से जीवित रहना पड़ता।' रमेश ने कहा। 'अगर मशीनों के आत्मा और पेट हो जायें तो वह भी हमारे साथ स्ट्राइक कर देगी।' सहसा रमेश का हाथ अपने मित्र के हाथ में आ गया। उसे लगा कि सूर्य की रौशनी और गर्मी सिमट कर उन दोनों हाथों की हथेलियों पर नृत्य करने लगी है। उसके दिल का दर्द धीरे धीरे पिघलने लगा। उसने अनुभव किया कि रात बहुत सुन्दर है, सुबह भी सुन्दर होगी।

रमेश ने चन्द्र के चेहरे की तरफ़ देखा। उसके चेहरे पर

लपकते हुए शोले की परछाईं ऐसे पड़ रही थी जैसे कि चेहरा कभी ग़म से मुरझा रहा हो और कभी खुशी से चमक रहा हो।

'चन्द्र !' रमेश ने कहा और चन्द्र के हाथों में उसके हाथ की पकड़ मज़बूत हो गई।

चांदनी रात की व्यथा

रात अभी शेष थी, केवल चांदनी रात का दर्द जाग रहा था। राजन औंधे मुंह लेटे कर सोने का प्रयत्न कर रहा था। लेकिन खांसी के दौरे से वह बार बार परेशान हो रहा था।

'प्रेमकला !' राजन ने पानी मांगा। परन्तु दूसरे क्षण ही उसे ध्यान आया कि प्रेमकला अभी वापिस नहीं आई। खिड़की से शरद पूर्णिमा की किरणें उसके अधूरे चित्र पर पड़ रही थीं। शायद ढाई बजे का समय होग। वह फिर खांसने लगा। वह स्वप्न तंद्रा में लेटा रहा। करीब तीन बजे प्रेमकला के पदचाप से वह सीधा होकर लेट गया। उसके पैरों में किसी तूफ़ानी नदी का शोर था। द्वार के पास आकर उसकी पदचाप धीमी हो गई, जैसे कोई लहर चांद छूकर शान्त हो जाए। कमरे में प्रवेश करते ही प्रेमकला ने दीप जला दिया। राजन ने अधखुली आंखों से उसकी ओर देखा। और वह खांसने लगा।

'—बाबा तुम सोये नहीं।'—प्रेमकला उसके समीप आकर बैठ गई।

'—नींद नहीं आई।'—वह खांसा। 'मालूम होता है अब जीवन संध्या पास आ गई है।'—राजन खांसते २ बोला।

'—बाबा तुम अच्छे हो जाओगे। प्रदीप कहता है जब मैं एम. बी. बी. एस कर लूंगा तो बाबा का इलाज करूंगा।'—प्रेमकला ने उसकी छाती पर बाम की मालिश करते हुये कहा।

'—पगली ! कभी तीसरी स्टेज में भी इलाज हुआ है ?' राजन के मुख पर निराशा दौड़ गई।

'—बाबा आज चांदनी कितनी पागल बनाने वाली है।' प्रेमकला फिर स्वयं लजा गई।

'—तुम कोई गर्म कपड़ा लेकर नहीं गई, बाहर कैसी शीत है। अच्छा जाओ सो जाओ।'—राजन ने उसके कपोलों पर एक हल्की थपकी देते हुए कहा।

राजन धीरे २ सोने लगा। प्रेमकला होले २ स्वरों में गुनगुनाने लगी जैसे दूर नदी किनारे पांव धोते कोई पायल छनका रहा हो। राजन को फिर खांसी का दौरा पड़ा। प्रेमकला गुनगुना रही थी।

'—प्रेमकला ! क्या तुम गा रही थीं ?'—राजन ने उसे पास बुलाया।

'—हां बाबा, बहुत सुन्दर गीत है, सुनोगे।' उत्तर की प्रतीक्षा के बिना ही उसने गाना प्रारम्भ कर दिया —

'रूप तेरा था कला मेरी थी
मद माता यौवन जीवन का
सृष्टि सारी नाच उठी
जब प्रेम की वीणा बाज उठी'—

प्रेमकला गा रही थी। राजन शान्त था। 'उसके स्वर में कितनी मधुरता है। कितना सुन्दर है यह गीत जैसे मैंने ही लिखा हो।' राजन की आंखे प्रसन्नता से चमक उठीं।

'—हां बाबा, बहुत सुन्दर है। बाबा, मुझे चित्र बनाना सिखा दो। मैं एक ऐसा चित्र बनाना चाहती हूं, बाबा, ऐसा चित्र—जिसमें

सृष्टी का सारा सौन्दर्य, यौवन के साथ सिमट आये। दूर बहुत दूर मैं और—आप, मुझे चित्र बनाना सिखाओगे।' राजन उसके चेहरे की बढ़ती हुई लालिमा, आंखों की चमक, होंठों की कंपकपी और उसके हाथों की भावुक कंपन को ध्यान से देखता रहा।

'—आज की रात...'—प्रेमकला शान्त हो गई। शायद राजन सो गया था। परन्तु उसके अतीत के धुन्धले चित्रों की रेखायें उभर रहीं थीं। आज की रात शरद् पूर्णिमा की रात है—वर्ष की सबसे सुन्दर रात। बीस वर्ष पहले उस पर भी एक ऐसी ही रात आई थी। जिस में चांदनी में कसकती व्यथा थी और दीपक के प्रकाश में तिमिर का नृतन। मैकफर्सन लेक में एक नाव में वह और रुपज्योति तारों को नाचते हुए देख रहे थे। राजन ने उससे कहा—'रुपज्योति जानती हो, लोग हमारे बारे में क्या क्या कहते हैं?'

'—नहीं तो'—ज्योति ने अनजान की भान्ति सिर हिला कर कहा।

'—लोग कहते हैं कि मैं और तुम, तुम और मैं, अर्थात हम दोनों......।'

उसने जानबूझ कर वाक्य अधूरा छोड़ दिया। रुपज्योति कांपने लगी, वह लोक लाज से मुंह छिपा कर रोने लगी। जब उसने मुंह से हाथ हटाए तो नाव तट पर थी। झंझा की लहरें समाप्त हो गई थीं और राजन चला आया था। उसने सोचा शायद रुपज्योति के हृदय की ज्योति बुझ गई है। और फिर लखनऊ कला मन्दिर में चित्रकला उससे चित्र बनाना सीखने आई थी। धीरे धीरे चित्रों में जीवन आने लगा और चित्रों का रङ्ग रुप निखरने लगा—चित्र बोलने लगे—चित्र

ही तो थे। 'तुम उदास क्यों हो ?' एक चित्र ने दूसरे चित्र से कहा। 'ऐसे ही।'—दूसरे चित्र ने उत्तर दिया।

'—मैं जानता हूं तुम्हारी उदासीनता का कारण क्या है—'प्रेम।'

'—नहीं, यह बात नहीं।'

'—नहीं।'—राजन चौंक उठा—दोनों चित्रों के रङ्ग बिखरने लगे। राजन के हाथ से वह चित्र गिर पड़ा जिसे उसने एक वर्ष के परिश्रम से तैय्यार किया था—एक सजीव चित्र। चित्र की रेखायें मध्य होते २ मिटने ही वाली थीं कि चित्रकला का पत्र आया—'राजन मेरी उदासी का कारण तुम्हीं थे। मुझे तुम से......।' पत्र अधूरा था। राजन ने उसके पीछे उत्तर लिख कर भेज दिया—'मैं काश्मीर सैनेटोरियम में हूं।'

कलामन्दिर वीरान हो गया। चित्रों पर धूल जम गई। राजन कलामन्दिर छोड़ कर चला आया था।

और फिर उसने स्वर्णबाला से कहा—'शरद् पूर्णिमा की रात कितनी पागल बना देने वाली होती है। ताजमहल चलोगी ?'

'—मुझे आज रात फिल्म देखना है और शाम को साड़ी भी खरीदनी है।'

राजन की आंखों के सामने उसका दिया हुआ रेशम का दिल घूम गया और वह मुस्करा दिया।

स्वर्ण बाला ने एक दिन उससे कहा,'आओ पिकनिक चलें।'

'—मेरी तबीयत ठीक नहीं।' राजन ने कहा।

'ओह !' और वह चली गई।

पल भर के उन्माद के कारण किसी ने फूल को मसल डाला। वह देखता रहा कि स्वर्ण कला ने उससे कहा, 'राजन ! मुझे तुम से प्रेम है।'

'—प्रेम !'—वह हंसा।

'—आओ, तुम्हें एक गीत सुनाऊं।'

'—तुम गीत कब से लिखने लगे ?'—राजन उसकी ओर देख केवल मुस्करा दिया और गीत सुनाने लगा—'न होता।'

'—कितना सुन्दर गीत है। यह गीत मुझे देदो।'—स्वर्ण बाला ने कहा।

'—गीत ? मैं तुम्हारे लिये साड़ी लाया हूँ।' राजन ने तारों सी झिलमिलाती साड़ी उसकी ओर फैंक दी। साड़ी उसके पीछे पड़ी हुई 'रोमियो जूलियट' के विरह-दुखान्त चित्र पर जा पड़ी।

और राजन नगर नगर का आवारा हो गया। किसी प्रकाश की की खोज में—यह वही नगर था जहां उसने प्रीतिमा से पूछा था—

'—तुम गीत क्यों नहीं लिखतीं ?'

'—आता नहीं।'

'—तुम चित्र क्यों नहीं बनातीं ?'

'—आता नहीं।'

'—तुम नृत्य क्यों नहीं करतीं।'

'—आता नहीं।'

'—तो तुमने इस प्रेम में क्या पाया ?'

× × ×

स्मृतियां समाप्त हो गई। राजन भी थक गया था। वह कहीं बैठकर यह कहानी लिखना चाहता था। उसकी अपनी कहानी समाप्त हो रही थी—उसके एक फेफड़े में पानी भर चुका था और दूसरा आहिस्ता २ खाया जा रहा था।

लेकिन ?

रुपकला और प्रेम—जीवन और सृष्टि !

उसने अपनी इसी आवारगी में प्रेमकला को एक ठिठुरती हुई शरद् पूर्णिमा की रात को रोते हुये पाया था—वह नवजात शिशु थी। राजन ने एक चतुर शिल्पी की भांति उसको घढ़ा, एक निपुण चित्रकार शिल्पी की भांति उसका रङ्ग-रुप निखारा, एक कहानीकार की भांति उसकी राहों और मंज़िलों का निर्माण किया और एक गीतकार की भांति उसमें जीवन के सौंदर्य और माधुर्य की लहर उठाई और उसका नाम रखा 'प्रेमकला'; राजन के होंठों पर मुस्कराहट फैल गई। एकाएक उसे खांसी का एक ज़बरदस्त दौरा पड़ा। वह खून थूकने लगा। प्रेमकला चित्र बनाने में तल्लीन थी। एकदम उठ कर आई, 'बाबा बहुत कष्ट है ?'

'—नहीं, वह गीत सुनाओगी ?'

'—क्यों नहीं!' प्रेमकला उसके निकट बैठ गई और उसके सफेद बालों में कोमल अंगुलियां फेरती हुई गाने लगी।

'—तुमने लिखा है ?'

'—नहीं, प्रदीप ने—बाबा, प्रदीप कवि बन गया है।' उसके चेहरे पर अंगारे दहक रहे थे। शरद् पूर्णिमा की किरणें उसे और भी अधिक सुन्दर बना रही थीं। ऐसा प्रतीत होता था कि वह एक ही रात

में अल्हड़ छोकरी से मदमाते यौवन का रूप धारण कर गई हो—और जब यौवन गुनगुनाए, चांदनी पागल बनाए और रूप देर से आये—'प्रेमकला......'

'—बाबा ...!' राजन ने उसे ज़ोर से भींच लिया, दूसरे क्षण ही उसका आलिंगन शिथिल पड़ गया।

'—बाबा ! तुम्हें क्या हो रहा है ?'

राजन मुस्कराया—'तू यह जानती है कि प्रेम-पूर्णता के बिना मृत्यु कितनी कठिन है...... ।'

प्रेमकला एकदम भय से चीख उठी—राजन के बेजार शरीर से लिपटकर रोने लगी। राजन की आंखों में बुझे हुए दीपक जल रहे थे—उसके होंठों की मुरझाई कलियां खिल रहीं थीं।

जेल

चांदनी रात जेल में भी आती है और तारे जेल में भी आंखें झपकाते हैं और किसी की याद जेल की ऊंची दीवारों को काट कर हौले हौले दिल में नश्तर चुभोती है। शरद् रात की खामोशी में बैठा सोच रहा था और वह स्वयं नहीं जानता था कि वह क्या सोच रहा है ? इसी सोच में चांदनी रात खत्म हो गई और तारे डूब गये और उषा की लाली उसके सेल में धीरे धीरे दाखिल होने लगी।

आज मुलाकात का दिन था। जेल की ज़िन्दगी में मुलाकात की प्रतीक्षा जिस बेचैनी से की जाती है उसका अनुमान जेल के बाहर रहने वाले शायद कभी भी न लगा सकेंगे। सुबह सुबह उठकर मुलाकात की तय्यारियां शुरू हो जाती हैं। मोहन जल्दी जल्दी शेव बना रहा है। कालीचरन लोटा गर्म करके कपड़े प्रेस कर रहा है। जमील बालों में सरसों के तेल की मालिश कर रहा है। सुरेश डन्ड पेल रहा और एक दिन में ही मोटा बनकर दिखाना चाहता है। विप्पनदा किताबों को समेटकर एकत्रित कर रहा है। रामचन्द्रन अगली मुलाकात में मंगवाने वाली चीज़ों की सूची तय्यार कर रहा है। मुलाकात कितनी आनन्ददायक होती है। जेल के नीरस जीवन में एक हलचल सी पैदा कर देती है। मुलाकात कितनी ज़रूरी होती है। जेल में रह कर भी आदमी समझता है कि वह बाहर की दुनिया में सांस ले रहा है। मुलाकात जेल में उसे बेबसी के घूंट पिलवाती है और जेल से रिहाई

के बाद का ख्याल नये जीवन के स्वप्न दिखाता है। ज़िन्दगी झूम के नाच उठती है। क्योंकि मोहन की माँ मथुरा के पेड़े और सोहन हलुवा अवश्य लाएगी। कालीचरन की नीली पतलून आजाएगी। जमील का भाई उसके बढ़े हुए बालों के लिये हाथी दांत की कंघी लाएगा। सुरेश का बेटा अपने बाप के लिए एक अपने वाला गुब्बारा लाएगा। विपिनदा का मित्र उसके लिए शरद बाबू की पुस्तकें लाएगा। रामचन्द्रन की स्त्री उसके लिए सूई धागा बटन सिट लाएगी और शरद के लिए कोई सिगरेट का डिब्बा ले आयगा और वह अन्दर ही मंगवा लेगा।

आज सुबह ही जब वह उठा और तकिए के नीचे हाथ डाला तो उसे मालूम हुआ कि सिगरेट खत्म हो चुकी हैं। उसने रामचन्द्रन से बीड़ी मांगी।

'एक बीड़ी देना—रामचन्द्रन।'

रामचन्द्रन ने कान में उड़सी हुई बीड़ी निकालते हुए कहा 'दो सिगरेट लूंगा—दो गोल्डफ्लेक।'

'हां, दो गोल्डफ्लेक।' शरद ने बीड़ी सुलगाई और पुस्तक पढ़ने लगा।

'आज तो मुलाकात है ना ?' सुरेश ने डन्ड पेलते हुये कहा।

'मुलाकात है भाई आज।' काली चरन का हाथ लोटे से लग कर बल गया था।

'मुलाकात भी खूब चीज़ है।' जमील की उङ्गलियां उसके बालों में तेज़ी से हरकत करने लगीं।

'सोहन हलुवे की सुगन्ध अभी से आ रही है।' विपिनदा ने भी कह ही डाला।

मुलाकात हो गई। दिन भर लोग खुश थे। मोहन की माँ गांव से वापस न आ सकी थी इसलिए मोहन हलुवे की कल्पना कर के ही रह गया। काजीवरन की पतलून तो आ गई थी मगर खाकी। जमील का भाई नक़ली हाथी दांत की कंघी ले आया था। सुरेश का बेटा सख्त बीमार था और उसे गुब्बारे के अतिरिक्त पेरोल पर रिहाई का प्राथना पत्र देने की सूचना मिली। विपिनदा के पास शरद बाबू की पुस्तकें आ गई और कुछ सन्तरी ने रोक लीं। रामचन्द्रन की स्त्री सुई धागा, बटन, ब्लेड और न जाने क्या क्या ले आई थी और शरद के लिए गोल्ड फ्लेक का डिब्बा रामचन्द्रन के हाथ अन्दर आ गया। शरद ने दो सिगरेटें निकालीं और उनकी ओर बढ़ा दीं। रामचन्द्रन एक सिगरेट अपने होंठों में और दूसरी शरद के होंठों में सुलगाते हुए बोला, 'सिगरेट का धुआं भी विचित्र चीज़ है शरद। ऐसा मालूम होता है कि मैं ज़हर पी रहा हूं।' रामचन्द्रन के सफेद भवों के नीचे काली आंखों में विगत किसी याद की लहर दौड़ गई।

'शरद तुम मुलाकात करने नहीं गए?' विपिनदा ने पुस्तकों के बोझ तले दबे हुए कहा। 'क्या कोई नहीं मिलने आया?'

'नहीं!' शरद ने सिगरेट की राख झाड़ते हुए कहा।

'तुम्हारा बाप क्यों नहीं आता?'

'वह मुझ से नाराज़ है।'

'तुम्हार मां?'

'मर चुकी है।'

'तुम्हारा भाई ?'

'बिज़नेस पर बाहर गया है।'

'तुम्हारी बहन ?'

'बहुत छोटी है।'

'और तुम्हारी.........मेरा मतलब है तुम्हारी।' विपिनदा की ऐनक मोटी होती गयी।

'स्त्री कोई नहीं।' शरद मुस्कराया और सिगरेट निकाल कर विपिनदा को देने लगा 'लो विपिनदा कभी कभी सिगरेट पीने में भी बड़ा मज़ा आता है।'

विपिनदा चला गया। सूर्य धीरे धीरे अस्त होने लगा। सब लोग अपने अपने सैल में बन्द कर दिये गये। जो सबसे अधिक खुश था वह सबसे अधिक उदास हो गया। किसी किसी सैल से गुनगुनाने की आवाज़ आ रही थी। शरद के साथ वाले सेल वाला मुलज़िम, जो एक सेठ के क़त्ल के मुक़दमा में बन्दी था, ऊंची आवाज़ में गा रहा था।

ज़ालिम ज़माना मुझ को तुझ से छुड़ा रहा है
अंजाम ज़िन्दगी का नज़दीक आ रहा है।

उसकी आवाज़ में इतना सोज़ था कि शरद पढ़ना छोड़ कर उसका गाना सुनना शुरू कर देता। चाहे गाना किसी घटिया फ़िल्म का ही क्यों न हो। वह तो केवल उसकी आवाज़ से सोज़ को समोता था। सिगरेट का धुआं उड़ाता था और रामचन्द्रन के शब्दों में ज़हर पीता था।

दूर जेल की आड़ से चांद प्रगट हुआ। चांद की किरणें लोहे के सीखंचों से गुज़र कर उसके सैल के फ़र्श पर फिसलने लगीं। शरद ने कागज़ निकाला और पत्र लिखने लगा। उसके दिल का दर्द शब्दों में ढलता जा रहा था : 'प्रियतम, तुम समझती होगी कि मैं कितना अहंवादी हूं कि तुम से मिलने नहीं आता——।' उसने सिगरेट निकाली और सुलगा ली और पत्र लिखता रहा। सारी रात वह बैठा पत्र लिखता रहा। सितारों को तोड़ कर शब्दों में रंग भरता रहा और चांद की किरणों से विचारों के इन्द्रजाल बुनता रहा। दूसरे दिन शाम को जब नम्बरदार आया तो उसने टिकट लगाकर पत्र उसे दे दिया, और स्वयं सैल में आकर लेट गया। सायंकाल का धुंधलका धीरे धीरे बढ़ रहा था और वह सोच रहा था कि किस तरह उसका पत्र नीला के पास पहुँचेगा। और उसे मालूम होगा कि वह क्यों मुलाकात के दिन उसे मिलने नहीं जाता। और वह अपने ख्याल के चित्रपट पर नीला की भीगी भीगी आंखें दौड़ते हुए देख रहा था। नीला की आंखों के नीचे शब्द फूल की पत्ती पर हिमकण की भांति कांप रहे होंगे।

'प्रियतम—तुम समझती होगी कि मैं कितना अहंवादी हूं कि जब तुम इतनी दूर से मुलाकात के दिन आती हो तो मैं तुम से मिलने से इन्कार कर देता हूं। आज भी मुझे उदास देख कर रामचन्द्रन ने कहा था 'सिगरेट का धुआं भी विचित्र चीज़ है शरद। जब मैं सिगरेट पीता हूँ तो ऐसा मालूम होता है कि ज़हर पी रहा हूं।'—आज तुम बहुत याद आ रही हो। चांदनी रात जेल में भी आती है और तारे जेल में भी आंखें झपकाते हैं और तुम्हारी याद जेल के एकान्त में कई बार तड़पा देती है। तुम सोचती होगी कि मैं जेल में आकर बदल गया हूँगा। सिगरेट पीकर दार्शनिक बनने का प्रयत्न कर रहा हूँ। नीला, कभी कभी मैं

सोचता हूं कि यह जेल कैसा है ? जिस में चांदनी रात है। जिसमें नीले आकाश पर दूर दूर तक सितारे ही सितारे फैले हुए हैं। क्यों नहीं कोई इस जेल पर छत डाल देता ताकि न चांद की किरणों की ठंडक और रोशनी महसूस हो और न तारों को देख कर तुम्हारी याद आए... दर्द जगे। जेल में तुम्हारी याद है जो रात के साथ साथ बढ़ती चली जाती है और सुबह होते होते किसी टूटे हुए स्वप्न की वेदना छोड़ चली जाती है। मैं मुलाकात के दिन तुम्हारी आंखों में आंखें डाल कर देख सकता हूं। लेकिन मैं नहीं चाहता कि तुम्हारी आंखों में मेरी आंखें डूबते देखने के लिए किसी सैन्सर की दो आंखें हमारी आंखों का पीछा करती रहें। और यह समझने की कोशिश करें कि मैं तुम्हारी आंखों में खोकर कोई षड़यन्त्र तो नहीं रच रहा। नीला, तुम मेरी हो और तुम्हारी आंखों में दूर तक डूबने का नशा भी मेरा है। इसे मैं हर निगाह से छिपाना चाहता हूं। मैं तुम से अवश्य मिलूँगा रिहाई के बाद, उसी झील के किनारे, जिसमें चाँद की किरणें लोहे के सींखचों से गुज़र कर नृत्य न करेंगी और तारे शोक से आतुर आंखें न झपकाएंगे। और दूर तक नीला आकाश फैलता चला गया होगा और लहरों के मधुर मधुर संगीत में हम और तुम सरगोशियाँ कर रहे होंगे और फूलों की भीनी भीनी सुगंध मद मस्त कर रही होगी और फिर पवन के एक झोंके से बिखरी हुई तुम्हारी लट को मैं उंगली में फेर कर झटक दूंगा। और तुम्हारी आंखों में आंखें डाल दूंगा और ठीक उस समय चाँद के चेहरे पर बादल छा जायेगा और सारी सृष्टि का केन्द्र हम बन जाएंगे और सारी सृष्टि की सुन्दरता हम में सिमट आयेगी। मैं, तुम और एकान्त—वहां किसी सैन्सर की दृष्टि तो न होगी······

शरद् एकदम तड़प कर उठ बैठा। उसे महसूस हुआ कि उसके

पत्र पर नीला की नहीं बल्कि सैन्सर की दृष्टि पड़ रही है। सब सितारों भरे शब्द राख हो गए और चांद की किरणों से बुना हुआ इन्द्रजाल टूट गया। जब नम्बरदार उसके सैल का दरवाज़ा बन्द करने आया तो शरद् ने उससे कहा—'नम्बरदार वह पत्र ज़रा देना।' और शरद् ने पत्र उसके हाथ से लेकर फाड़ दिया—'क्या हुआ बाबू जी! क्या कोई ऐसी वैसी बात लिख दी थी?' 'हां—बहुत बहुत षड्यन्त्र।' शरद् ने पत्र के पुर्जे उसके हाथ में डालते हुए कहा 'यह सैन्सर को दे देना।'

शरद् आ कर सैल में लेट गया। चांद निकलने वाला था और तारे चमकने वाले थे। साथ वाले सैल में कोई गुनगुना रहा था और उसे नींद नहीं आ रही थी। उसने सिगरेट निकाली और सुलगा ली।

'सिगरेट का धुंआ भी बड़ी विचित्र चीज़ है, ऐसा मालूम होता है कि ज़हर पी रहा हूं।' शरद् ने अपनी आंखें हाथों से ढांप ली और जेल में ही जेल से बहुत दूर निकल गया।

मकान की तलाश

मालिक मकान के आगमन से उमाकांत को यह मकान भी छोड़ना पड़ रहा था और वह अपने असहायपन पर विचार कर उदास हो रहा था। उसकी नज़रें टीन की मटमैली चादरों और सरकंडों की छतों पर से फिसलती हुई दूर बिरला मन्दिर के सुनहले कलश और नई देहली के विशाल भवनों पर जम गईं। सूरज की अन्तिम किरण सुनहले कलश और गगन चुम्बी भवनों को अपना अन्तिम चुम्बन देकर सिमटती जा रही थी और उदास संध्या के धुंधलके सोने की ओट में फैलने शुरू हो गये थे। फिर उमाकांत की नज़रें वृक्षों से उछलती, भवनों पर से गुजरती कुतब मीनार को ढूंढने लगीं, जहां लोग आकाश को छूने के लिए जाते हैं और सिर के बल धरती पर आ रहते हैं और पत्रकार अपने पत्र को महत्व देने के लिए इसे आत्महत्या का नाम दे देते हैं।

उमाकांत बराबर सोच रहा था—उसने आज भी अपनी पत्नी को पत्र न लिखा था, जो देहली से बहुत दूर अपने मायके में बैठी कल्पना के सुन्दर महल बना रही थी—वह शुभ घड़ी कब पास आयेगी कि जब वह देहली में अपने पति के पास रहेगी और स्वतन्त्र तितली की तरह नई देहली की जगमगाती हुई सड़कों पर घूमा करेगी और··· और······।

कदाचित देहली आने के बाद यह पहला दिन था कि उमाकांत ने अपनी रानी को पत्र न लिखा था। अन्यथा संध्या समय जब एकांत

की कटुता तीव्रतर हो उठती, वह कागज़ कलम लेकर बैठ जाता और कागज़ पर सुन्दर सपने उतरने लगते। कितना मनोहर होता था सपने का यह जाल—और उसे अनुभव होने लगता जैसे उसकी रानी उसके पास बैठी है और शीशमहल की छत्त आकाश से बातें कर रही है और नौकर चाकर इधर उधर घूम फिर रहे हैं···।

उसका हाथ लैटरबक्स में था और वह अपने आप में खोया हुआ सोच रहा था कि एक बार फिर उसे मकानों के जादूगरों को अपनी पीठ पर लाद कर मानव हड्डियों और रक्त के समुद्रों को पार करना होगा······।

'क्षमा कीजिए !' एक कोमल स्वर सुनकर उसका हाथ एकाएक लैटरबक्स से बाहिर आ गया।

'शायद आपने कोई भावनायुक्त पत्र पोस्ट किया है—' अपरिचित युवती ने लैटरबक्स में पत्र छोड़ते हुए कहा।

'नहीं तो—मैं इन मकानों की ओर देख रहा था—ये कितने तुच्छ हैं और कितने महान।'—उमाकांत ने अपरिचित युवती की ओर देखा और उसे लगा जैसे वह कोई सुन्दर चट्टान देख रहा हो जिसके साथ चश्मे का निर्मल जल टकरा कर मधुर संगीत उत्पन्न करता है। उसके चेहरे के एक-एक नक्श में विनय बसी हुई थी।

'आप सोचेंगे, अजीब लड़की है, न जान न पहचान—आप कुछ कुछ दार्शनिक मालूम होते हैं या कवि या···आखिर आप क्या सोच रहे हैं ?'

उमाकांत न दार्शनिक था न कवि। लेकिन जीवन उसे सब कुछ बना रहा था।

'मैं सोच रहा हूँ, इन तुच्छ मकानों में मनुष्य रहते हैं। यहाँ प्रेम

पलते हैं, घृणा जन्म लेती है। मनुष्य की उत्पत्ति होती है। मनुष्य मनुष्य बनता है और अन्त में भीख का प्याला लेकर फुटपाथ पर ठोकरें खाता है। यह मिट्टी ऐसी तुच्छ वस्तु से बने हुए मकान !! और आज मुझे यह भी प्राप्त नहीं !!!'

'तो आप मकान की खोज में हैं?' अपरिचित युवती खिलखिला कर हँस पड़ी और उमाकांत का सिर आप ही आप हिल गया।

'अगर आपको मकान मिल जाय तो ?' युवती ने कुछ इस ढंग से हाथ हिलाये जैसे कोई मछेरा मछलियां पकड़ने के लिए पानी में जाल फैंकता है।

'तो मैं किसी स्वर्ग की इच्छा भी छोड़ दूँगा, मेरा मकान होगा! मेरी···'प्रसन्नतावश उमाकांत अपने दोनों हाथ दबाने लगा।

''मेरे पास एक कमरा है—मैंने कल ही किराये पर लिया है। अगर आप उसमें रहना पसन्द करें और आधा किराया—'

'मुझे सब कुछ मन्जूर है, बस आप मुझे सिर छुपाने के लिए जगह दे दें ताकि मैं अपनी · ···'

'ताकि आप की ज़िन्दगी सँवर जाये—चलिये।' उमाकांत युवती के साथ साथ करौलबाग की ओर चल पड़ा। वह युवती की अपेक्षा अपने सम्बन्ध में सोच रहा था और अपनी रानी को यह शुभ समाचार सुनाने के लिए उचित शब्द ढूंढ रहा था। कुछ दूर जाने पर युवती एक दो मंज़िला मकान के सन्मुख रुक गई।

उमाकांत ने पहली बार युवती की आंखों में झांका। युवती खिलखिला कर हँस पड़ी और उसे बरामदे में छोड़, खट-खट दूसरी मंज़िल पर चली गई। थोड़ी देर के बाद उसने उमाकांत को ऊपर बुला

लिया। उतने बड़े मकान में केवल एक कमरा खाली था और वह भी केवल दो महीने के लिए; क्योंकि पहले किरायेदार गरमी की छुट्टियां गुज़ारने मसूरी की पहाड़ियों पर चले गये थे। साथ के कमरे में उनका सामान बन्द था। उमाकांत का स्वप्न भंग होने लगा। उसने चारों ओर घूमकर देखा। 'आप कहां रहेंगी?' परेशान हो उसने पूछा।

'घबराइये नहीं, यहां सब फैमली वाले ही रहते हैं, गुज़ारा तो हो ही जायेगा, मकान की बूढ़ी मालकिन अर्थपूर्ण ढंग से मुस्कराने लगी। युवती कुछ लजा गई।

और वे दोनों मकान के दरवाजे पर एक दूसरे से जुदा हो गये।

उमाकांत एक बार फिर करौलबाग़ के सुन्दर मकानों को पीछे छोड़ कर दुर्गन्ध में बसे और कीचड़ में लिथड़े मकानों में से गुज़र रहा था। वह अब उस अपरिचित युवती के सम्बन्ध में सोच रहा था। वह किसी कालेज में लैक्चरार थी। शायद उसके माता-पिता का देहान्त हो चुका था! और उससे विवाह करने को कोई तैयार न था—उसकी आयु भी काफी हो गई है और कुछ ऐसी विवश भी दिखाई नहीं देती जो एक पराये पुरुष के साथ एक ही कमरे में···उमाकांत इस कल्पना ही से घबरा उठा। परन्तु दूसरी ओर फुटपाथ का जीवन था। उसके मस्तिष्क पर वह अपरिचित युवती अपने अनुभूतिपूर्ण व्यक्तित्व के साथ छाये जा रही थी।

जब वह वापस करौलबाग़ पहुंचा तो रात उतर चुकी थी। युवती कमरे में झाड़ू दे रही थी। उमाकांत ने अपनी सेवायें प्रस्तुत कीं, लेकिन युवती ने मुस्कराते हुए टाल दिया। उमाकांत ने पहली बार उसकी आंखों में एक प्रसन्नतापूर्ण गृहस्थी जीवन व्यतीत करने की आकांक्षा देखी। उमाकांत दो चारपाइयां, एक मेज़ और एक कुर्सी

किराये पर ले आया और थोड़ी ही देर में वह छोटा सा कमरा अपने थोड़े से सामान के साथ एक छोटे से घर की शक्ल में परिवर्तित हो गया। अब उमाकांत चारपाई पर लेटा तो उसे ख्याल आया कि उसने खाना नहीं खाया। और शायद उस युवती ने भी नहीं खाया। वह चुपके से बाहर निकल गया और साथ के होटल से खाना भेज दिया। युवती ने पहले तो इन्कार किया फिर मान गई।

'आप भी खाइये ना!' उमाकांत को दरवाजे में खड़े देख युवती ने कहा।

'मैं खा चुका हूँ।,

'आप झूठ भी बोलते हैं?' युवती के कहने का ढंग इतना प्यारा था उमाकांत से इनकार न बन पड़ा और अपरिचितता की दीवारें गिरने लगीं।

'मैं कितना मूर्ख हूँ, अभी तक आप से नाम भी नहीं पूछा।'

'मैं भी कम मूर्ख नहीं हूँ—मुझे लता कहते हैं।'

'मेरा नाम उमाकांत है और मैं एक प्राइवेट फर्म में नौकर हूँ। मेरी......'

'तन्खाह बताने की ज़रूरत नहीं। मैं खाने का बिल दिए देती हूँ।' युवती एक बार फिर खिलखिला कर हँसी। जब लता पहले पहल हँसी थी तो उमाकांत ने उसे उसकी निर्लज्जता समझा था। परन्तु उसे बराबर खिलखिला कर हंसते देख कर उसे मालूम हुआ कि या तो वह बहुत दुखित थी या बहुत ही प्रसन्नचित्ता। वह कोई आवारा लड़की नहीं थी।

जब उमाकांत सोने के लिए चारपाई पर लेटा तो वह प्रसन्न

नहीं था। यद्यपि उसे सिर छुपाने को जगह मिल गई थी लेकिन उसे अपनी रानी याद आ रही थी। युवती हज़ार भद्र ही सही, फिर भी अपरिचित थी। उसे एक अपरिचित अविवाहित युवती के साथ एक कमरे में रहना होगा? वह सो न सका। इधर-उधर करवटें बदलता रहा और अन्त में उठ खड़ा हुआ और बाहर चला गया।

रात भर वह देहली की जागती सड़कों पर आवारा घूमता रहा। जैसे उसके जीवन का कोई उपयोग न हो। उसका कोई लक्ष्य न हो और उसे इसी प्रकार अन्धकार में भटकते रहना हो। रात भर वह सोचता रहा। स्वयं उसे भी मालूम नहीं था कि वह क्या सोच रहा है।

सुबह जब वह घर लौटा तो सूरज निकल चुका था। उसकी चार-पाई के सामने चाय पड़ी हुई थी। गरम चाय की भीनी-भीनी सुगन्धि और केतली से निकलते हुए धुएं ने उसके अनुभव को चमका दिया। लता कालेज की तैय्यारी में थी। आशा विरुद्ध लता ने उससे रात भर ग़ायब रहने का कारण न पूछा। उसने किताबें उठाईं और चुपचाप कालेज चली गई। उमाकांत के लिए यह चुप्पी किसी बहुत बड़ी डांट से भी अधिक कष्टदायक थी। इतना भय तो उसे कभी पत्नी से भी न हुआ था।

दिन भर वह विचित्र प्रकार के विचारों में उलझा रहा और फाइलों के ढेर में खोया रहा। सन्ध्या समय जब घर पहुँचा तो उसके साथ खाना पकाने का सामान भी था। लता कोई पुस्तक पढ़ रही थी। उसने उमाकांत का स्वागत हल्की सी मुस्कान से किया। और उमाकांत मौसम के सम्बन्ध में बातें करने लगा। वह सोच रहा था कि यह लड़की जो उसकी मां नहीं, बहिन नहीं, बेटी नहीं, पत्नी नहीं, कब तक

उसके जीवन का महत्वशाली अङ्ग बनी रहेगी और इसका क्या परिणाम निकलेगा ?

'क्या आपने सुबह खाना खाया था ?'

'भूख ही नहीं थी। और आपने ?'

'भूख ही नहीं थी।' लता ने भोलेपन से उत्तर दिया और खिल-खिला कर हंस पड़ी और फिर खाना पकाने में जुट गई।

धीरे-धीरे छोटे से कमरे का रंग रूप निखरने लगा और जीवन एक विशेष ढाँचे में ढलने लगा।

उमाकांत के लिये लता में स्त्री के समस्त गुण मौजूद थे। उसमें माँ का लाड, बहिन का प्रेम, बेटी की चंचलता और पत्नी की सेवा श्रद्धा सब कुछ था। लता जब पढ़ते-पढ़ते थक जाती तो सितार बजाने लगती और जब सितार बजाते बजाते उसे कोई विचार आ जाता तो उठ कर कमरे की सफाई करने लगती। इसी प्रकार वह स्वयं को किसी न किसी कार्य में लगाये रखती। उमाकांत भी पढ़ने में दिलचस्पी लेने लगा।

आज वह दफ्तर नहीं गया। वर्षा ज़ोरों पर थी और पढ़ने में उसका मन नहीं लग रहा था। एकाएक उसे याद आया कि इधर कई दिनों से उसने अपनी पत्नी को पत्र नहीं लिखा है। जब से वह उस घर में उठ आया था उसने एक भी पत्र नहीं लिखा था। वह चौंक पड़ा। लता भी पढ़ते पढ़ते थक गई थी और सितार पर कोई नया सुर निकालने की कोशिश कर रही थी। फिर वह पंजाबी का कोई गीत गाने लगी।

लता सितार बजा रही थी और गा रही थी लेकिन उमाकान्त के कानों में रानी की सुरीली आवाज़ गूंज रही थी। वर्षा ऋतु में वह भी इसी प्रकार पूरबी गीत गाती थी और वह उसे पत्र लिखने

लगा और फिर उसे मालूम ही न हुआ कि उसने कल पत्र समाप्त कर लिया है। जीवन भर में पहली बार उसने ऐसा सुन्दर पत्र लिखा था।

'क्या सोच रहे हैं आप?' लता ने गाना समाप्त करके पूछा।

'कुछ भी तो नहीं। आपके स्वर में खो गया था। आप कितना अच्छा गाती हैं। पंजाबी गीत कितने दिल को मोह लेने वाले होते हैं—क्या आप पंजाबी हैं?'

लता का चेहरा एकदम पीला पड़ गया। उसने ऐसे ही एक पुस्तक उठा ली और पढ़ने लगी। लेकिन अक्षर चर्खे के चक्कर की तरह घूम रहे थे। उसने दूसरी पुस्तक उठाई, लेकिन फिर तुरन्त ही उसे पटक कर खिड़की के सहारे खड़ी हो गई। वर्षा थम गई थी और लोग मकानों से निकल २ कर सड़क पर कूड़े-कचरे की तरह फैल गये थे। उमाकान्त अपनी प्यारी की याद में खोया हुआ था। आज उसे रानी से बिछुड़े पूरा एक वर्ष हो गया था। वह उसे देहली न ला सका क्योंकि उसके पास मकान नहीं था और जब मकान मिला तो...

...जब उमाकान्त सोने लगा तो उसे ख्याल आया कि लता बहुत देर से मौन है। शायद उदास है वह।

'लता तुम गाया न करो, तुम स्वयं भी उदास हो जाती हो और मैं भी।'

'क्षमा कीजिये मैं होश में न थी।' लता ने डूबे हुये स्वर में कहा,'यदि मैं आपको बता दूं कि मैं कौन हूं तो आप मुझ से घृणा करने लगेंगे, जिस प्रकार कि मेरे सब संबंधी करते हैं। आप सोचते होंगे कि मुझे दिन रात मेहनत करके अपना पेट क्यों पालना

पड़ता है। आपकी नज़रों ने कई बार प्रश्न किया है कि मैं कौन हूँ? मेरे मां-बाप कहां हैं? और मैं सितार बजाकर सब प्रश्नों का उत्तर देती रही। मैं पंजाबी हूं और पन्द्रह अगस्त के बाद अग़वा किये जाने वाली सैंकड़ों लड़कियों में से एक हूं। पूरा एक वर्ष गुण्डों के चुङ्गल में फंसी रहने के बाद अब छुटकारा हुआ है। मेरे माता पिता राजपुर रोड पर एक सुन्दर मकान में रहते हैं और मुझे ग्रहण कर वह अपनी इज्जत को धब्बा नहीं लगाना चाहते। उनके लिये मैं मर चुकी हूँ—लेकिन मैं उन्हें दिखा देना चाहती हूं कि अपनी रक्षक स्वयं बन सकती हूं—बन सकती हूं!' लता वेग में आकर चिल्ला रही थी फिर एकाएक वह खिलखिला कर हंस पड़ी।

उमाकान्त मौन था। उसके दिल में एकदम यह इच्छा उत्पन्न हुई कि वह प्रिय प्रेम से घायल युवती के सिर पर प्यार भरा हाथ रख दे, लेकिन वह चुपचाप लेटा रहा और सुनता रहा।

उमाकान्त अब विशेष रूप से लता का ख्याल रखने लगा ताकि उसके अतीत के अन्धेरे समाप्त हो जायें। वह उसकी छोटी से छोटी इच्छा भी पूरी करने की कोशिश करने लगा ताकि वह भरे संसार में स्वयं को अकेली न समझे। उसने सिगरेट सुलगाने के लिये माचिस की तलाश की। लता माचिस की डिबिया लेकर पहुँच गई।

'मैं सुलगा दूं?' उसने डिबिया से दियासलाई निकालते हुये कहा।

उमाकान्त ने हंसते हुये कहा, 'बुझा हुआ सिगरेट आप से नहीं जलेगा।' और वह सिगरेट सुलगा कर नीचे चला गया। लता की समझ में कुछ न आया कि जब वह उमाकान्त की बातों के बाद

कुछ कहने को होती है तो वह बाहिर क्यों चला जाता है। उसे कुछ ऐसा महसूस होता था जैसे कोई उसे पहाड़ के शिखर पर लेजाकर एकदम नीचे फैंक दे। और वह सोचने लगी कि क्या वह उस कमरे को छोड़ दे और वह पहर रात तक उमाकान्त की प्रतीक्षा करती रही। आज वह बहुत दिनों के बाद इतनी रात तक बाहिर घूम रहा था लेकिन जब उमाकान्त लौटा तो वह अपनी बाहों पर सिर रखे सो रही थी।

उमाकान्त के दिल में तूफान सा मचा हुआ था और वह सोच रहा था कि उसे अब उस कमरे में अधिक दिनों तक न रहना चाहिए और अब तो दो मास का समय भी कुछ दिनों तक समाप्त होने को था। लेकिन वह कहां जायेगा और लता कहां जायेगी? उसे रात भर नींद न आई। दूसरे दिन वह बहुत देर से उठा। लता कालेज जा चुकी थी। नहा धोकर जब वह भी कालेज जाने को तैयार हुआ तो एकदम चकित रह गया। उसके सामने उसकी रानी खड़ी मुस्करा रही थी। उमाकान्त पूरे एक वर्ष की जुदाई के बाद अपनी रानी को पाकर प्रसन्नता से खिल उठा। उसने अपने दोनों हाथ बढ़ाये लेकिन उसे लगा कि जैसे पीछे से कोई उसके हाथों को खैंच रहा हो।

'भीतर चलिये।' और उसकी रानी अटेची केस उठाकर भीतर आ गई और चारपाई पर बैठकर मुस्कराने लगी।

'मैंने तो लिखा था कि मकान का प्रबंध होने वाला है तुम्हें शीघ्र बुला लूंगा लेकिन.........'

'हूं! पूरा एक साल हो गया है।' रानी ने प्यार भरे क्रोध से कहा, 'क्या आपके मित्र ने मुझ से मिलने के लिये आपको रोक रक्खा है?'

'नहीं यह बात नहीं लेकिन...'

रानी कमरे का निरीक्षण करने लगी, 'कमरा तो अच्छा है।' उसकी नज़र सामने मेज़ पर शृङ्गार के सामान पर जा पड़ी, 'तो आपने सब प्रबन्ध पहले ही से कर रखा है, कितना ख्याल है आपको अपनी रानी का।' फिर उसकी नज़र दाईं ओर खूंटी पर लटकती हुई साड़ी और ब्लाऊज़ पर पड़ी और एकाएक उसकी आंखों में संदेह की लहरें दौड़ने लगीं। अब उसके सामने उमाकान्त एक अपराधी की तरह खड़ा था।

'शायद आप मेरे इन्तज़ार में रात भर जागते रहे हैं।' रानी के स्वर में व्यंग था और थी विचित्र प्रकार की कटुता।

'आपके मित्र काफी रोमांटिक मालूम होते हैं।' रानी ने पाउडर के डिब्बे के बाद लिपस्टिक को छूते हुये कहा, 'बिल्कुल स्त्री जान पड़ते हैं। यह क्रीम, यह...।'

'रानी, तुम बहक रही हो, बात असल में यह कि...' अचानक लता ने कमरे में प्रवेश किया। उसकी तबीअत कल से खराब थी, इस लिये शीघ्र लौट आई थी। दोनों ने एक दूसरे की ओर देखा। रानी की आंखों में घृणा थी और लता की आंखों में आश्चर्य। लेकिन दोनों ने हाथ जोड़ कर एक दूसरी का स्वागत किया।

'हूं!' रानी ने चाबी निकाल कर अटैचीकेस खोला। वह क्रोध से कांप रही थी। अटैची से एक पत्रों का पुलंदा निकाल कर उसने उमाकांत के मुंह पर दे मारा।

उमाकांत को लगा जैसे उसके वर्षों की तपस्या किसी बिन किये पाप के कारण धूल में मिल गई हो। उसने कुछ कहना चाहा लेकिन कुछ भी न कह पाया। इन हालात में अपनी सफाई की कोई दलील देना सच को झूठ सिद्ध करने के तुल्य था।

'मैंने पूरे एक साल तक तुम्हारा इन्तज़ार किया!' रानी पागल सी हो उठी। 'और तुम यहां आवारा छोकरियों से......'

'रानी!' उमाकान्त चिल्लाया।

लेकिन रानी दरवाज़े को धक्का देकर बाहिर निकल गई।

लता अभी तक मौन थी और वह बात की तह में पहुँचने की कोशिश कर रही थी।

'यह कौन थी?' आखिर उसने पूछ ही लिया।

'मेरी पत्नी, मेरी रानी!'

'मैं समझती थी आपका विवाह नहीं हुआ।'

'उसी तरह जिस तरह मकान की मालकिन के सामने मैं आपका पति था। क्योंकि उसी दशा में आपको मकान मिल सकता था!' उमाकान्त ने डूबे हुये मन से कहा।

और लता को अनुभव हुआ कि वह अनजान नहीं था। दोनों अपने ही बने हुये जाल में फंस चुके थे। अब वे पर फड़फड़ा रहे थे। लेकिन जाल उनके गिर्द लिपटता चला जाता था। सारे वातावरण पर उदासी छा रही थी।

उमाकान्त ने जेब से बुझा हुआ सिगरेट निकाला और माचिस तलाश करने लगा। लता ने माचिस की डिबिया उसके सामने फैंक दी।

'अब इसे तुम ही सुलगा दो!' एक निर्जीव व्यक्ति की तरह उमाकान्त ने कहा।

× × ×

और तीन दिन के बाद उन्हें फिर मकान ढूंढना पड़ रहा था।

फूल, बच्चा और ज़िन्दगी

"या यह शाम न होती या वह तनहा न होता। कुछ खुशी होती, कुछ ग़म होता, तो जन्म से लेकर मौत तक, शून्य के बजाय ज़िन्दगी होती। वरना वह एक बच्चा ही होता।" विस्मित आंखों से अपने इर्द-गिर्द की दुनिया को एक चमत्कार की भाँति देख कर बेकार ख्यालों की गति में बहते-बहते अपनी ज़िन्दगी के बारे में रमण की प्रतिक्रिया इससे भी अधिक तीव्र होती। मगर वह अपनी खिड़की के सामने आ खड़ा हुआ और सहसा अपने हाथों से खिड़की के सींखचों को झिंझोड़ने लगा। वह किसी जेल का बन्दी न था, जो सींखचे तोड़ कर मुक्त हो जाने की आकांक्षा कर सकता। वे सींखचे तो उसके अपने ही कमरे की खिड़की के सींखचे थे, जो कभी भी तोड़े जा सकते थे। मगर क्या वह इस कमरे के सूनेपन से आज़ाद हो जाएगा? उसने खिड़की के पर्दे हटा दिए थे। सामने कोलतार की सड़क दूर तक फैली चली गई थी और उस पर सिमटते सूर्य की ओट के उमड़ते हुए अन्धेरे में, कोलतार की स्याही में एक अजीब-सा दर्द घुलता जा रहा था।

लोग-बाग अपने घरों में पराजित सैनिकों की तरह वापिस लौट रहे थे। किसी की टोकरी से पालक के साग और मूली के पत्ते झाँक रहे थे। किसी के कैरियर पर खाली टिफ़न-कैरियर, किसी पर पुरानी किताबें और मोटी-मोटी फ़ाइलें थीं। किसी की साइकल के हैंडिल के साथ बड़ा-सा गुब्बारा हवा में उड़ता जा रहा था। कभी कोई मोटर फ़र्राटे से गुज़र

जाती थी और पैदल चलने वाले लोग एक क्षण के लिये फुटपाथ पर आकर फिर सड़क पर फैल जाते थे।

रमण के कमरे के सामने बस स्टॉप था। मुसाफ़िर कतार में खड़े थे। उनकी दृष्टि दूर तक सड़क पर गड़ी हुई थी। कोई 'ईवनिंग न्यूज़' पढ़ रहा था, कोई बाल सँवार रहा था, कोई टाई की नॉट ठीक कर रहा था, कोई चेहरा पोंछ रहा था, कोई दांतों से कुछ निकाल रहा था और कोई पान चबा रहा था, लेकिन सब का ध्यान था एक आवाज़, एक झलक की प्रतीक्षा में।

लोग आध घण्टे से खड़े थे। एक के साथ दूसरा और दूसरे के साथ तीसरा, इस तरह एक लम्बी लाईन बन गई थी। मगर सब अजनबी थे। वह सोचने लगा कि आदमियों की वह बाढ़ 'बस' के अन्दर बन्द हो जाएगी और फिर लोग 'बस' से निकल कर सड़क पर फैलते हुए अपने-अपने दरबों में साँस दुरुस्त करने के लिये घुस जाएंगे। 'बस' चलती रहेगी, लाइनें लगती रहेंगी और लोग अजनबी रहेंगे।

रमण इन ख्यालों से उकता गया। यदि वह लोगों को देखता और उनके बारे में न सोचता, तो शाम इतनी थका देने वाली न होती। रमण ने सड़क से दृष्टि हटा ली और कमरे के बाहर देखने लगा। खिड़की के पास ही उसने गुलाब का पौधा लगा रखा था, मगर मुद्दत से उसने पौधे को पानी देना बन्द कर दिया था। गुलाब का पौधा मुरझा गया था। गुलाब के फूल आखिर किसके लिए? उसने सोचा और पर्दा गिरा दिया और आकर चारपाई पर अधलेटा-सा छत की ओर देखने लगा। शाम समाप्त हो रही थी। उसने एक पत्रिका उठाई और पढ़ने लगा। उसने पत्रिका रख दी। उसे कमरे के चित्र बेज़बान साये से प्रतीत हुए। उसने लेटे-लेटे छत की कड़ियाँ गिननी शुरू कर दीं। लेकिन दायें, बायें, हर तरफ़ से गिनने के बाद भी वे पन्द्रह से न कम होती थीं, न अधिक। अन्धेरा, सुनसान,

अकेलापन, बेकार ख्याल और दबी-दबी सिसकियों की आवाज़ सुन कर उसके थके हुए विचारों की गति एक क्षण के लिये रुक गयी। उसने सोचा, यह आवाज़ शायद उस स्त्री की है, जो रात गये सिलाई की मशीन चलाती रहती है। शुरू--शुरू में जब वह इस कमरे में आया था, तो उसे मशीन की आवाज़ से बड़ी उलझन होती थी, कमरे की छत पर मशीन के 'घर्घर' स्वर से ऐसा प्रतीत होता था, मानो छत धीरे-धीरे नीचे सरकती आ रही है—नीचे, और नीचे बिलकुल उसके शरीर के ऊपर। उसे ऐसा मालूम होता था, जैसे कि उसकी छाती पर कोई मशीन चला रहा है। धीरे-धीरे वह इस आवाज़ से परिचित हो गया। रात को वह सो जाता, तो अचानक मशीन के बन्द हो जाने से उसकी नींद खुल जाती थी। जब तक मशीन चलती रहती थी, वह स्वप्न देखता रहता था—कभी-कभी उस स्त्री के बारे में, हर बार नये रूप में, नये कोण से। मशीन के नीचे खिसकते हुए कपड़ों की सरसराहट उसके दिमाग़ में रेंगती रहती थी। वह कुछ देर के लिये आंख बन्द कर लेट गया, ताकि वह इस विचार से छुटकारा पा सके। लेकिन आँखें मूँदते ही उस स्त्री का चित्र अपनी समस्त रेखाओं के साथ स्पष्ट हो गया है। एक स्त्री दबे स्वर में रो रही है और उसे नींद नहीं आ रही।

रमण को पहली बार महसूस हुआ कि मशीन का स्वर उसके जीवन के अन्तर्तम तक पहुँच चुका है। मशीन की आवाज़ उसकी नींद के लिए कितनी आवश्यक है: एक लोहे की मशीन की आवाज़ एक आदमी की नींद के लिये, उसके स्वप्न के लिए, जिसकी धमनियों में सांस चलती है जिसके रगों में लहू दौड़ता है, जिसकी छाती में दिल धड़कता है, जो दफ्तर में काम करता है सोचता है और छत की कड़ियां गिनता है! छत के ऊपर मशीन चलती है और आज यह मशीन बन्द है। उसके ऊपर एक औरत झुकी हुई रो रही है। रमण

ने इधर-उधर करवट बदली, मगर उसे नींद न आई। उसने बत्ती बुझा दी और अन्धेरे में अपने बिखरे विचारों को समेटने की चेष्टा की, किन्तु हर विचार के पीछे दो डबडबायी आँखें झिलमिला रही थीं। नींद दूर थी और रमण को कुछ सूझ नहीं रहा था—वह सहसा अपने बिस्तर से उठा और सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। वह पहली बार छत पर गया था। कई बार उसने छत पर जाने का विचार किया था, मगर ताज़ा हवा के लिये, मीठी धूप सेंकने के लिए या चाँदनी रात का नज़ारा करने के लिए वह कभी भी छत पर नहीं जा सका था। दरवाजे पर पहुँच कर रमण ठिठक गया। उसे विचित्र-सा मालूम हुआ कि वह ऊपर क्यों आ गया। आकाश पर दूर-दूर तारे फैले हुए थे और उसके नीचे वह मौन खड़ा था। वह नीचे उतर आया और चारपाई पर अधलेटा-सा हो गया। उसके मस्तिष्क में विचारों का जमघट नहीं था, बल्कि एक धुँधली-सी बेचैनी थी। मशीन की आवाज़ और साँस लेती हुई स्त्री में कितना अन्तर है! वह बिस्तर से उठा और एक बार फिर छत पर पहुँच गया। सामने कमरे में एक औरत मशीन पर झुकी रो रही थी और उसकी गोद में एक नन्हा बच्चा आँखें मूँदे निश्चल सो रहा था। रमण बिना पूछे ही कमरे के अन्दर चला गया। उस स्त्री ने अचकचा कर सिर उठाया, एक क्षण के लिए उसकी ओर देखा और फिर वह सिर झुका कर आँसू पोंछने लगी। उसकी आँखों में क्या था? उसकी आँखों में केवल स्निग्ध सौन्दर्य था जो माँ बनने के बाद पूर्ण होता है। वह साधारण रूप-रंग की, अधेड़ आयु की एक औरत थी।

"सर्दी लग गयी है! शायद निमोनिया······"रमण ने बच्चे की नाड़ी टटोलते हुए और उसके शरीर का स्पर्श करते हुए कहा। वह स्त्री गुमसुम बैठी रही।

"क्या किसी डाक्टर को बुलाया है ?" रमण ने पूछा।

"हकीम जी ने एक नुस्खा दिया था।" औरत ने सफ़ेद पाउडर की पुड़िया उसके सामने सरका दी।

"तुम्हारे पति कहाँ हैं ?"

औरत मौन रही।

'क्या वे......' रमण एकदम मौन हो गया। उसने देखा कि औरत की मांग में सिन्धूर है। उड़ा उड़ा सा बुझा बुझा सा।

रमण नीचे उतर आया। वह अपने बिस्तर की ओर बढ़ने लगा। अचानक उसने कोट पहना। कुछ मिनिटों में ही वह डाक्टर को बुला लाया।। डाक्टर ने नाड़ी देखी और दवा दे दी। रमण डाक्टर को छोड़ने दरवाज़े तक आया। फ़ीस की रकम देते हुये उसकी आंखें कुछ पूछ रही थीं। 'कोई चिन्ता की बात नहीं, तुम्हारा बच्चा ठीक हो जायगा।' डाक्टर ने कहा। रमण कुछ कहना चाहता था, लेकिन डाक्टर चला गया।

रमण आकर बिस्तर पर लेट गया। छत की कड़ियां अब भी पन्द्रह थीं। उसके मस्तिष्क में एक अजीब सी शून्यता छा गई थी किन्तु उसके हृदय में एक प्रकार की स्निग्ध भावना उमड़ रही थी। सुबह उठकर वह रोज़ की भांति खिड़की के सामने आ खड़ा हुआ। गुलाब का पौधा उसी तरह मुरझाया हुआ था। वह बाहर निकल आया। मुद्दत से उसने पौधे को पानी नहीं दिया था। किस तरह मुरझा गया है। रमण ने बालटी उठायी और पानी देने लगा। इतने में वह औरत नीचे आ गयी।

'कैसी तबीयत है बच्ची की ?' रमण ने पूछा।

'अच्छी है।'

'बहुत शीघ्र अच्छी हो जायेगी। डाक्टर कहता था कि आज वह फिर आयेगा और दवा दे जायेगा।' मालूम नहीं, वह औरत खड़ी थी या चली गयी थी। रमण पानी देने में खोया रहा और उस के हाथ सूखे हुये पत्तों को संवारने लगे। उसके दिल में गुलाब का फूल खिल रहा था—नर्म, कोमल, सुन्दर सा, किसी नन्हें-मुन्ने बच्चे के गालों की तरह।